सामाजिक व्यवस्था के रूप में स्कूली कक्षा

अमेरिकी समाज में इसके कुछ प्रकार्य*

टॅलकॉट पार्सन्स

टॅलकॉट पार्सन्स यहां शिक्षा पर प्रकार्यात्मक-ढांचागत दृष्टि को सामने रखते हैं। वे कहते हैं कि शिक्षा के दो काम हैं- 1. क्षमताओं व प्रतिबद्धताओं का समाजीकरण करना तथा 2. भूमिकाएं बांटना। प्रकार्यात्मक-ढांचागत सोच मुख्य रूप से शिक्षा को एक वृहत्तर सामाजिक व्यवस्था के अंग के रूप में दिखलाता है, पर उन व्यवस्थागत तनावों और ताकतों की अनदेखी करता है जो शिक्षा को बदलते हैं।

यह आलेख, बहुत संक्षेप में ही सही, प्राथमिक और माध्यमिक स्कूली कक्षाओं को एक सामाजिक व्यवस्था के रूप में देखते हुए, समाजीकरण और वितरण की एजेन्सी के रूप में समाज में उनके प्राथमिक प्रकार्यों का विश्लेषण करने की दिशा में एक रूपरेखा देने का प्रयास करता है। हालांकि स्कूली कक्षा आमतौर पर एक बड़े संगठन का हिस्सा होती है, पर यहां विश्लेषण की इकाई के रूप में पूरी स्कूल के बजाय कक्षा होगी क्योंकि यही वह स्थान है जिसे स्कूली व्यवस्था और विद्यार्थी दोनों ही के द्वारा औपचारिक शिक्षा प्रदान किए जाने के कार्यस्थल के रूप में चिह्नित किया जाता है। प्राथमिक विद्यालय में एक श्रेणी के छात्र एक कक्षा में एक मुख्य शिक्षक के अधिकार में रहते हैं, परन्तु माध्यमिक विद्यालय में और कई बार आमतौर पर प्राथमिक विद्यालय की ऊपरी कक्षाओं में भी छात्र अलग-अलग विषय अलग-अलग शिक्षकों से पढ़ते हैं। कक्षाओं के इस मिश्रण में एक ही छात्र कैसे सहभागी रहा यह देखना हमारे अध्ययन के लिए महत्त्वपूर्ण इकाई है।

सवाल : समाजीकरण और चयन

ऐसे में दोहरे सवाल पर हमारा ध्यान केंद्रित होता है- पहला, भविष्य की वयस्क भूमिकाओं के लिए प्रतिबद्धताएं एवं क्षमताएं विद्यार्थी द्वारा आत्मसात करने के लिए स्कूली कक्षाएं किन प्रकार्यों को अंजाम देती हैं और दूसरा, वयस्क समाज के भूमिकाओं के ढांचे में इन मानव संसाधनों को वितरित करने का प्रकार्य वे किस तरह निभाती हैं। यह दोहरे सवालों की गुत्थी जिन प्राथमिक तरीकों से परस्पर संबंधों को उबारती है, उससे हमें हमारे संदर्भों के मुख्य बिंदु मिलेंगे।

प्रथमतः, प्रकार्यात्मक दृष्टि से विद्यालयी कक्षा को समाजीकरण की एजेन्सी के रूप में देखा जा सकता है। इसका अर्थ है कि यह वयस्क भूमिकाओं को निभाने के लिए प्रेरणात्मक और तकनीकी तौर पर परिपूर्ण व्यक्तित्वों के लिए प्रशिक्षण की एजेन्सी है। यह इस तरह की

एक मात्र एजेन्सी नहीं है- परिवार, अनौपचारिक मित्र समूह, चर्च और अन्य सामुदायिक स्वयंसेवी संगठन, सभी इसमें अपना योगदान देते हैं, जैसे प्रत्यक्षरूप से कार्यस्थल पर होने वाला प्रशिक्षण भी अपनी भूमिका निभाता है परंतु प्राथमिक विद्यालय में प्रवेश से लेकर श्रमिक शक्ति का हिस्सा बनने या शादी होने तक, विद्यालयी कक्षा को ही समाजीकरण की प्रमुख एजेन्सी के रूप में रेखांकित किया जा सकता है।

भविष्य में निर्धारित भूमिकाओं के लिए आवश्यक प्रतिबद्धता और क्षमता का विकास व्यक्तियों में करना समाजीकरण का मुख्य प्रकार्य है। प्रतिबद्धताओं को दो प्रमुख अंगों में बांटा जा सकता है। समाज के व्यापक 'मूल्यों' को क्रियान्वित करने की प्रतिबद्धता और समाज की संरचना में विशिष्ट प्रकार की भूमिकाओं के लिए प्रतिबद्धता। इस तरह किसी सामान्य काम से जुड़ा व्यक्ति एक मजबूत नागरिक साबित हो सकता है क्योंकि वह अपने काम के प्रति ईमानदार है, भले ही वह समाज के ऊंचे आदर्शवादी मूल्यों के प्रति गंभीर और दृढ़ आस्था न दिखा पाता हो। इसके विपरीत, कोई शादी और परिवार में महिलाओं की अहम् भूमिका को इस आधार पर वाहियात ठहरा सकता है क्योंकि इससे उद्यम, सरकार और ऐसे ही अन्य क्षेत्रों में समाज का जो मानव संसाधन समान रूप से अपने हुनर को काम में ला सकता था, उससे वह वंचित रह रहा है। क्षमताओं को भी दो भागों में बांटा जा सकता है; पहला है, व्यक्ति की भूमिकाओं के संदर्भ में योग्यता या कार्य करने के लिए जरूरी कौशल और दूसरा, 'भूमिकाओं की जिम्मेदारी' उठाने या दूसरों की अपेक्षाओं पर खरा उतरने की क्षमता। ऐसे में किसी मेकेनिक या डॉक्टर के लिए उसके 'पेशे से जुड़ा' हुनर मूलभूत रूप से आत्मसात होना जितना जरूरी है, उतना ही उनके व्यवसाय के कारण उनके संपर्क मे आ रहे लोगों से जिम्मेदारी से पेश आना भी आवश्यक है।

जहां, एक तरफ, विद्यालयी कक्षाएं प्रतिबद्धताओं और क्षमताओं के विविध अंगों को विकसित करने वाली प्रमुख एजेन्सी हैं वहीं, दूसरी तरफ, समाज के परिप्रेक्ष्य से यह 'मानवशक्ति' का वितरण करने वाली एजेन्सी हैं। अमेरिकी समाज में यह सर्वश्रुत है कि व्यक्ति की समाज में प्रस्थिति के स्तर और उस व्यक्ति के शिक्षा प्राप्ति के स्तर में काफी प्रगाढ़ और शायद हर दिन बढ़ता हुआ संबंध है। सामाजिक प्रस्थिति का स्तर और शिक्षा प्राप्ति का स्तर दोनों ही सीधे रूप में व्यावसायिक प्रस्थिति से संबंधित है, जिसे व्यक्ति अर्जित करता है। सामान्य प्रक्रिया के तहत शैक्षिक और व्यावसायिक उन्नयन के लिए उच्च माध्यमिक स्तर तक शिक्षा लेना न्यूनतम शिक्षार्जन का एक सामान्य मात्रक बनकर उभरा है कि भविष्य के व्यावसायिक प्रस्थिति पाने की दिशा में विशिष्ट आयु-समूह के बीच निर्णायक तत्व महाविद्यालय में जाएंगे अथवा नहीं।

हमारी दिलचस्पी फिर इसमें है कि विद्यालयी कक्षा के हमारे समाज में कौनसे ऐसे निर्धारक तत्व हैं जो विशिष्ट सम-वयस्क समूह के महाविद्यालय में जाने और नहीं जाने वालों के बीच फर्क को सामने रखते हैं। स्थानीयता की परंपरा और व्यावहारिक बहुलतावाद के कारण विभिन्न शहरों और राज्यों की विद्यालयी व्यवस्था में साफतौर पर गौर करने लायक विभिन्नताएं सामने आती हैं। बोस्टन महानगर की परिस्थिति देश के अन्य हिस्सों के मुकाबले शायद सबसे ज्यादा ढांचाबद्ध प्रारूप पेश करती है। शायद वह इतनी अतिवादी भी नहीं कि उसे प्रमुख लक्षणों के संदर्भ में भ्रमित कर दे।

हालांकि हाई स्कूल के स्नातक हुए बिना महाविद्यालय में वास्तविक प्रवेश नहीं होता है, परंतु हाई स्कूल में महाविद्यालयी प्रवेश के लिए तैयारी करवाने वाले कोर्स के लिए नामदर्ज करने वाले और नहीं करने वालों के बीच फर्क करने वाली एक विभाजन रेखा निश्चित होती है; नौवीं कक्षा में जब यह निर्णय लिया जाता है, उससे किसी भी दिशा में विचलन बहुत ही कम देखा गया है। अभी तक जो साक्ष्य रहे हैं, उससे यह सामने आता है कि प्राथमिक विद्यालय में छात्र के प्रदर्शन का रिकॉर्ड चयन का मुख्य आधार होता है। इस रिकॉर्ड को शिक्षकों और प्रधानाध्यापक द्वारा जांचा-परखा जाता है और ऐसे कुछ ही मामले होते हैं जहां उनके सुझावों के विपरीत कॉलेज के प्रवेश के लिए तैयारी करने वाले कोर्स में दाखिले हुए हों। इसलिए मोटा-मोटी यह कहना कि साक्ष्य को अनावश्यक खींचना नहीं होगा कि प्राथमिक विद्यालयों में भेदात्मक विद्यालयी प्रदर्शन के आधार पर ही चयन हो जाता है और जूनियर हाई स्कूल में इसी चयन पर 'मुहर' लगाई जाती है।[1]

चयनात्मक प्रक्रिया शुद्धतः पृथक होने के भी साक्ष्य उपलब्ध हैं। लगभग सभी तुलनात्मक प्रक्रियाओं में, प्रदत्त और अर्जित कारक नतीजों को प्रभावित करते हैं। इस संदर्भ में बच्चे के परिवार को सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति प्रदत्तकारक है और उसकी व्यक्तिगत क्षमता उसकी उपलब्धियों के अवसर निर्धारित करती है। बोस्टन के हाई स्कूलों के 3,348 लड़कों पर किए गए, जिस अध्ययन के आधार पर ये सामान्यीकरण किए जा रहे हैं, उसमें ये सभी कारक कॉलेज-शिक्षा की योजना से गहरे संबंधित हैं। महाविद्यालयी प्रवेश की योजना बनाने वाले लड़कों का पिता के व्यवसाय के आधार पर अनुपात इस प्रकार था : 12 प्रतिशत निम्न कुशल और अकुशल श्रमिक, 19 प्रतिशत कुशल श्रमिक वर्ग, 26 प्रतिशत निम्न स्तरीय सफेदपोश व्यवसायों से, 33 प्रतिशत मध्य स्तरीय सफेदपोश व्यवसायी और 20 प्रतिशत उच्च स्तरीय सफेदपोश व्यवसाय से जुड़े थे। उसी तरह, क्षमता (जिसे आईक्यू के आधार पर निर्धारित किया गया) के

आधार पर महाविद्यालयी प्रवेश का इरादा रखने वालों के प्रतिशत इस प्रकार थे- सबसे निम्न पंचमांश में 11 प्रतिशत, उससे अगले में 17 प्रतिशत, मझले पर 14 प्रतिशत, उसके ऊपर वाले पंचमांश में 30 प्रतिशत और सबसे ऊंचे स्तर पर 52 प्रतिशत। क्षमता के किसी भी पंचमांश पर पिता के व्यवसाय का महाविद्यालय में प्रवेश लेने की योजना के साथ संबंध स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। उदाहरण के लिए, क्षमता नापने के सबसे ऊपर के पंचमांश में महाविद्यालय जाने का इरादा रखने वालों में से 29 प्रतिशत लड़कों के पिता श्रमिक वर्ग से थे तो 89 प्रतिशत ऐसे थे जिनके पिता उच्च स्तरीय सफेदपोश व्यवसाय से संबंधित थे।[2]

यहां पर प्रमुख बिंदु ये प्रतीत होते हैं कि महाविद्यालयी और गैर-महाविद्यालयी समूह के बीच अंतर करने वाले चयन के आधार सापेक्ष रूप से सार्वभौमिक हैं और उस दल के महत्त्वपूर्ण हिस्से के लिए भी इन आधारों का नियमन 'चलताऊ' प्रक्रिया नहीं है- वे केवल पूर्व-निर्धारित प्रदत्त परिस्थितियों की पुष्टि करने का तरीका मात्र नहीं है। ये तय है कि ऊंची प्रस्थिति से आने वाले ऊंची क्षमताओं से युक्त लड़कों की महाविद्यालय में दाखिल होने की संभावना सच में निश्चय ही अधिक है और निम्न प्रस्थिति, निम्न क्षमताओं वाले लड़के के दाखिल होने की सबसे कमजोर संभावना है। परंतु जिनके लिए इन दो कारकों का संपात[3] नहीं बैठता, ऐसे 'मिश्र प्रमाणित' समूह खासा महत्त्व रखते हैं।

इस तरह के विवेचन मुझे इस निष्कर्ष पर पहुंचाते हैं कि विभेदीकरण (जो अन्य परिप्रेक्ष्य से चयन की प्रक्रिया है) की मुख्य प्रक्रिया प्राथमिक विद्यालय से शुरू होती है, जिसका एकमात्र अक्ष उपलब्धियों पर टिका हुआ है। मोटेतौर पर हाई स्कूल के स्तर पर यह विभेदीकरण महाविद्यालय में जाने वाले और महाविद्यालय न जाने वालों के बीच एक द्वैध बढ़ा देता है।

इस प्रारूप के महत्त्व को परखने के लिए व्यक्ति के समाजीकरण में उसके स्थान को देखने की हम कोशिश करते हैं। औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में प्रवेश करना अभिमुखीकरण करने वाले परिवार के प्राथमिक जुड़ाव के बाहर बच्चे का पहला कदम है। परिवार में उसकी प्रेरणात्मक व्यवस्था की नींव डाली जाती है, लेकिन बाद की भूमिकाओं के लिए स्पष्ट रूप से 'निर्धारित' और मानसिक तौर पर प्रभावी जो मूलभूत गुणधर्म उस समय तक विकसित हुआ होता है वह है लैंगिक भूमिका। उत्तर ईडियस स्तर का बच्चा औपचारिक शिक्षा व्यवस्था में जब प्रवेश करता है तो वह लड़का या लड़की के रूप में खुद की निश्चित तौर पर पहचान बना चुका है, परंतु इसके आगे चलकर उसकी 'भूमिकाओं' को वर्गीकृत कर नहीं पाता। चयन प्रक्रिया के आधार पर जब विभिन्न किस्म की भूमिकाओं के लिए व्यक्ति चुनाव करता है या चुना जाता है, उसका क्रियान्वयन होना अभी बाकी है।

बच्चे की मनोवृत्ति आधारों की चर्चा तो हम यहां नहीं कर सकते पर यह कहा जा सकता है कि, जिस सबसे महत्त्वपूर्ण मनोवृत्ति के साथ बच्चा विद्यालय में प्रवेश करता है वह है उसकी व्यक्तिगत स्तर की स्वतंत्रता। इसका मतलब है कि वयस्कों द्वारा दिए गए सापेक्ष मार्गदर्शन के संदर्भ में उसकी आत्म-निर्भरता यानी नई और विभिन्न तरह की परिस्थितियों में जिम्मेदारी उठाने और अपना निर्णय लेने की उसकी क्षमता और परिवार में रहने के अनुभव उसे यहां उसके लैंगिक भूमिकाओं के निर्धारण की तरह की मददगार साबित होते हैं।

पीढ़ी, उम्र और लिंग जैसे जैवकीय आधार पर निर्धारित होता स्थान परिवार की सामूहिकता की प्रस्थितीय संरचना में प्रदत्त रूप में प्राप्त होता है। इससे सापेक्ष प्रदर्शन में अपरिहार्य अंतर आते हैं और उन्हें जिस तरह पुरस्कृत किया जाता और सजा दी जाती है, उससे विभेदी चरित्रों का निर्माण करने में योगदान मिलता है। परंतु इन भेदों को संस्थागत सामाजिक प्रस्थिति के रूप में विधिवत समर्थन नहीं मिलता। विद्यालय ही समाजीकरण की वह पहली एजेन्सी है जो अजैवकीय आधार पर प्रस्थिति के विभेदीकरण को संस्थागत रूप से बच्चे के अनुभवों का हिस्सा बनाती है। और तो और, एजेन्ट के रूप में काम करने वाला शिक्षक जो कार्य देता है, उसके विभेदी प्रदर्शन के आधार पर इस प्रस्थिति की 'कमाई' की गई है। इस परिस्थिति की संरचना का हम अवलोकन करें।

प्राथमिक विद्यालयी कक्षा की संरचना

अमेरिकी संस्थाओं में पाई जाने वाली सामान्यतः विस्तृत विभिन्नताओं के मद्देनजर और विद्यालयी व्यवस्था पर मूलतः आजमाए जाने वाले स्थानीय नियंत्रण के चलते विद्यालयी परिस्थितियों में काफी विभिन्नताएं पाई जाती हैं। परन्तु उनमें सापेक्ष रूप से सुव्याख्यायित रूपरेखा देखने को मिलती है।[4]

खासकर प्राथमिक श्रेणियों की कक्षाओं में, यानी पहली तीन श्रेणियों में, मूलभूत प्रारूप के स्वरूप एक कक्षा के लिए एक मुख्य शिक्षक नियुक्त होता है, जो सभी विषय पढ़ाता है और उस कक्षा का सामान्यतौर पर प्रभारी होता है। कुछेक मामलों में इन छोटे स्तर की कक्षाओं में और अधिकतर इससे आगे के स्तर की कक्षाओं में कुछ खास विषयों के लिए, जैसे विशेषकर खेलकूद, संगीत ओर कला के लिए अन्य शिक्षकों को पढ़ाने बुलाया जाता है। परंतु, इससे मुख्य शिक्षक की केंद्रीय भूमिका पर कोई असर नहीं पड़ता। यह शिक्षक आमतौर पर महिला होती है।[5] विद्यालयी अकादमिक साल में कक्षा इस एक शिक्षक के साथ रहती है, परंतु उसके बाद आमतौर पर उसी शिक्षक को उस कक्षा के साथ नहीं रखा जाता। फिर कक्षा बनती है, (आस-पड़ोस के

सापेक्ष रूप से छोटे भौगोलिक इलाके से आने वाले) 25 सम-वयस्क बच्चों से, जो दोनों लिंगों से लगभग समान रूप से लिए जाते हैं। कुछ मायनों में लिंग को छोड़कर, विद्यालयी कक्षा में प्रस्थिति में अंतर करने के कोई औपचारिक आधार नहीं होते। मुख्य संरचनात्मक अंतर धीरे-धीरे विकसित होते हैं और जैसे कि ऊपर उल्लेख किया गया है, इसका प्रमुख अक्ष, उपलब्धियों के रूप में देखा जाता है। परिस्थिति से जुड़े चार प्राथमिक गुणतत्वों से यह सुनिश्चित किया जाता है कि इस विभेदन का प्रमुख और एकमात्र ही अक्ष रहे। जिस पड़ोस से ये प्रतियोगी आते हैं, वह पूरे समाज के मुकाबले काफी ज्यादा समरूपता रखता है और इसलिए पहले गुणतत्व के रूप में यह कहा जा सकता है कि 'प्रतियोगियों' की प्रस्थिति में उम्र ओर 'पारिवारिक पृष्ठभूमि' के स्तर पर समानता बरती गई है। दूसरी परिस्थिति समान कार्यभार के निर्धारण से जुड़ी है जो कि अन्य कार्यभार-क्षेत्रों के मुकाबले चमत्कारिक रूप से अविभेदित था। भूमिका-प्रदर्शन की अन्य परिस्थितियों के मुकाबले इस संदर्भ में विद्यालय की परिस्थिति अधिकाधिक रूप से किसी नस्ल की तरह है। तीसरी परिस्थिति ये है कि शुरुआती समानता के स्तर पर बड़े छात्र और अकेले शिक्षक में, जो कि खुद एक वयस्क है और इस नाते पूरे वयस्क समाज का ''प्रतिनिधित्व'' करता है, तीव्र ध्रुवीकरण है। चौथा गुणतत्व यह है कि छात्रों के प्रदर्शन का मूल्यमापन करने के लिए सापेक्ष रूप से व्यवस्थित प्रक्रिया होती है। छात्रों के परिप्रेक्ष्य से यह मूल्यमापन खासकर (अगर पूरी तरह से नामी माना जाए) तो गुणों और प्रगति पत्र के रूप में काम में लिया जाता है; शिक्षा व्यवस्था की दृष्टि से, जो कि वितरण की एजेन्सी के रूप में कार्य करती है, यह समाज में भविष्य की प्रस्थिति के लिए चयन का आधार बनता है।

इस संरचनात्मक प्रारूप की व्याख्या करते हुए योग्यताओं के दो प्रमुख मंचों का ध्यान रखना आवश्यक है, परंतु मैं मानता हूं कि इससे उसकी प्रमुख रूपरेखा का महत्त्व खत्म नहीं होता। पहली योग्यता औपचारिक संगठनों की विभिन्नताएं और विद्यालयी कक्षा की ही प्रक्रियाओं के संदर्भ में है। यहां सबसे प्रमुख भिन्नता सापेक्षतः 'पारंपरिक' विद्यालयों और सापेक्ष्यतः 'प्रगतिशील' विद्यालयों के बीच उभरकर आती है।

पारंपरिक किस्म के विद्यालय विषयवस्तु के आधार पर अलग-अलग इकाईयों के अस्तित्व पर जोर देते हैं तो दूसरी तरफ प्रगतिशील किस्म के विद्यालय 'प्रोजेक्ट' बनाने जैसे 'अप्रत्यक्ष' अध्यापन की शैलियों को अपनाने पर जोर देते हैं ताकि व्यापक वैषयिक रुचियों का ध्यान रखकर एक पंथ दो काज साकार किए जा सकते हैं। प्रगतिशील विद्यालयों में छात्रों को समूहों में काम करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जबकि पारंपरिक विद्यालयों में शिक्षक का छात्र से व्यक्तिगत स्तर पर संपर्क संबंध बनाए रखने पर जोर दिया जाता है। इसका संबंध उस प्रगतिशील परिप्रेक्ष्य से है जहां विद्यार्थियों में सीधी स्पर्धा के बनिस्बत सहकारिता को बढ़ावा दिया जाता है, कठोर अनुशासन के बजाय उदारता को प्रोत्साहित करना और औपचारिक तौर पर अंक देने को हतोत्साहित करना शामिल है।[6] कुछ विद्यालयों में इनमें से किसी एक भाग पर ज्यादा जोर दिया गया होगा, किसी में अन्य पर, फिर भी भिन्नताओं का प्रमुख विन्यास बहुत स्पष्ट है। मैं सोचता हूं कि इसका बहुतार्थी संबंध आत्म-निर्भरता-परनिर्भरता के प्रशिक्षण से है जो कि परिवार में होने वाले शुरुआती दौर के समाजीकरण से आता है। मेरी मोटा-मोटी समझ यह बनती है कि आत्म-निर्भरता के प्रशिक्षण पर जोर देने वालों के प्रगतिशील शिक्षा के पक्षधर होने की संभावना अधिक रहती है। प्रगतिशील शिक्षा के समर्थन का ऊंची सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति से और बौद्धिक रुचियों से और इसी तरह के संबंध होना सर्वज्ञात हैं। आत्म-निर्भरता और सहकारिता इन दोनों पर जोर देने और छात्रों में सामूहिक ऐक्य में कोई विसंगति नहीं है। पहली बात तो यह है कि इस उम्र में और वयस्कों में भी आत्म-निर्भरता पर अधिक बल दिया जाना समस्यापरक बन जाता है। फिर भी, यह कहा जा सकता है कि विद्यालयी कक्षा में आमतौर पर बनने वाला मित्र-समूह इस बात की अप्रत्यक्ष अभिव्यक्ति करता है कि इस दौर में आसपास के वयस्कों से विस्थापित होने के बाद किसी पर निर्भर होने की जरूरत को बच्चा महसूस करता है।

योग्यताओं का दूसरा समुच्चय विद्यालयी कक्षा के 'अनौपचारिक' आयामों से जुड़ा हुआ है, जो औपचारिक अपेक्षाओं से थोड़ा-बहुत हमेशा ही अलग होता है।

उदाहरण के लिए, लिंगों में कोई अन्तर न किया जाए इसके लिए बने औपचारिक प्रारूप को अनौपचारिक तौर पर बदल सकता है क्योंकि प्रमुख रूप से एक लिंग के भिन्न समूह की विशेषता अपने को अलग रूप माना है। उदाहरण के लिए, कक्षा में शिक्षक लड़के और लड़कियों में समूह के तौर पर स्पर्धा को बढ़ावा देते हैं, फिर भी, सह-शिक्षा का तथ्य और दोनों लिंगों के साथ समान रूप से बर्ताव रखने का औपचारिक प्रमुख संदर्भों में किया गया प्रयास काफी महत्त्व रखता है। दूसरी अनौपचारिक संस्थाओं ने जो दूसरी समस्या उठाई है, वह यह सवाल है कि विद्यालय की सार्वभौमिक अपेक्षाओं के कितने-खिलाफ जाकर शिक्षक-विद्यार्थियों से व्यवहार करते हैं या कर पाते हैं ? फिर भी अन्य किस्म की औपचारिक संगठनों से तुलना करने पर मैं सोचता हूं कि प्राथमिक विद्यालयों में इस विसंगति की मात्रा कोई अनोखी प्रतीत नहीं होती। विद्यालयी कक्षा की संरचना ऐसी होती है कि विशेषीकृत व्यवहार के अवसर बहुत ही सीमित होते हैं। विद्यालयी कक्षा में क्योंकि परिवार के बनिस्बत ज्यादा बच्चे होते हैं और वे

इतनी सीमित आयु परिधि में इकट्ठे होते हैं, इसलिए शिक्षक के पास अभिभावकों के मुकाबले विशेषीकृत झुकाव दिखाने के बहुत कम मौके होते हैं।

इन दोनों योग्यताओं के समुच्चयों को ध्यान में रखते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचना तर्कसंगत है कि इस देश में प्राथमिक विद्यालयों की मुख्य चारित्रिक विशेषताएं वैसी ही हैं, जैसी उनकी रूपरेखा प्रस्तुत की गई है। इस पर विशेष बल दिया जाना चाहिए कि कमोबेश प्रगतिशील विद्यालय, औपचारिक मूल्यांकन प्रणाली पर कम बल देने के बावजूद कोई अलग-सा प्रारूप नहीं लागू करते बल्कि उसी प्रारूप में सामूहिक हेर-फेर की प्रवृत्तियां नजर आती हैं। किसी भी और की तरह प्रगतिशील शिक्षक, कक्षा के मूल्यों और लक्ष्यों के आधार पर अपने विद्यार्थियों के विविध गुणों का मूल्यांकन करेगा और औपचारिक तौर पर नहीं तो अनौपचारिक ढंग से इस मूल्यांकन के बारे में उन्हें बतला भी देगा। मुझे ये लगता है कि इस तुलनात्मक मूल्यांकन की अवहेलना करने के अधिकतम मामले उन उच्च प्रस्थिति के विद्यालयों तक ही सीमित रहते हैं, जहां अच्छे महाविद्यालय में प्रवेश इस तरह से गृहीत तत्व माना गया है कि वह व्यावहारिक तौर पर प्रदत्त परिस्थिति के रूप में ही सामने आता है। दूसरे शब्दों में, इन तथ्यों को परिभाषित करते हुए विद्यालयी कक्षाओं के चयन के प्रकार्य को ध्यान के केंद्र में सतत रखा जाना चाहिए : इसकी महत्ता स्पष्ट रूप से घट नहीं रही है, बल्कि हो इसके उलट रहा है।

विद्यालयी उपलब्धि की प्रकृति

तो अब देखें कि प्राथमिक विद्यालय के बच्चों से अपेक्षित 'उपलब्धियों' की विषयवस्तु क्या है ? सबसे व्यापक विशेषता जो शायद चिह्नित की जा सकती है, वह ये है कि इसके भीतर प्रदर्शन के वे प्रकार समाहित होते हैं जो एक तरफ विद्यालयी परिस्थितियों के अनुरूप हों और दूसरी तरफ वयस्कों को अपने-आपमें महत्त्वपूर्ण लगे। इस धुंधली और कुछ हद तक चक्राकार चारित्रिक विशेषता को, जैसे कि पहले उल्लेख किया गया है, दो मुख्य भागों में बांटा जा सकता है। इनमें से एक अधिक विशुद्ध रूप से तथ्य, कौशल और आनुभविक ज्ञान और तकनीकी कुशलता से जुड़े संदर्भों के दायरे में साधन की 'संज्ञानात्मक' प्रक्रिया है। लिखित भाषा और गणितीय सोच के प्रारंभिक चरण निश्चित रूप से महत्त्वपूर्ण हैं। विद्यालय में जाने से पहले बच्चे द्वारा ग्रहण किए गए ज्ञान के मुकाबले सामान्यीकरण और अमूर्तन के बिल्कुल ही नए स्तर पर संज्ञानात्मक कौशल को शामिल करते हैं। इन मूलभूत क्षमताओं में दुनिया के बारे में बहुत-सी तथ्यात्मक जानकारी का आत्मसातीकरण भी होता है।

दूसरे मुख्य अंग को मोटा-मोटी 'नैतिक' की संज्ञा दी जा सकती है। पुराने दौर की विद्यालयी शिक्षा में इसे 'आचरण' के रूप में जाना जाता था। थोड़ा और सामान्य ढंग में इसे विद्यालयी समुदाय में जिम्मेदार नागरिक कहकर संबोधित किया जा सकता है। शिक्षकों के लिए आदर, अन्य साथी विद्यार्थियों की बातों को 'तवज्जो' देना और 'सहकारिता' और अच्छी 'कार्यशैली' ये गुण 'नेतृत्व' और 'पहल' करने की क्षमता को आगे बढ़ाते हैं।

उपलब्धि की विषयवस्तु के बारे में आश्चर्यजनक तथ्य ये है प्राथमिक कक्षाओं में ये दोनों प्रमुख अंगों से स्पष्ट रूप से अंतर नहीं किया जाता। उल्टा, विद्यार्थियों का मूल्यांकन धुंधले सामान्य पैमानों पर किया जाता है : अच्छा विद्यार्थी उसे कहा जाता है जिसमें संज्ञानात्मक और नैतिक अंगों का मेल हो जहां एक या दूसरे अंग को बदलते परिणामस्वरूप महत्त्व दिया गया हो। मोटा-मोटी कहा जाए तो हम यह कह सकते हैं कि प्राथमिक विद्यालय में 'ऊंची उपलब्धि' पाने वालों में दोनों ही तरह के विद्यार्थी होते हैं- वे जो तेज ग्रहणशक्ति के बल पर बौद्धिक कार्यों को आसानी से पूर्ण करते हैं और वे भी जो अधिक 'जिम्मेदार' हैं जिनका अच्छा बर्ताव है और कक्षा संभालने में अगर कोई समस्या हो तो शिक्षक जिन पर आसानी से निर्भर रह सकते हैं। इस मामले में एक सूचक इस तथ्य की ओर इशारा करता है कि प्राथमिक विद्यालयों में शुद्ध बौद्धिक कार्य ऊंची बौद्धिक क्षमता रखने वाले विद्यार्थियों के लिए बहुत ही आसान साबित होते हैं। बहुत से ऐसे मामलों में यह मान लिया गया है कि दरअसल विद्यार्थियों के लिए असली चुनौती उनकी बौद्धिक क्षमताओं के लिए नहीं, बल्कि 'नैतिक' क्षमताओं के लिए हैं। कुल मिलाकर प्रगतिशील आंदोलन इस अंग पर अधिक बल देने की दिशा में अपना झुकाव यह सुझाते हुए दिखा रहा है कि इन दोनों अंगों में से यह अंग अधिक समस्यामूलक है।[7]

यहां मूल मुद्दा यह है कि समाजीकरण के प्रकार्य के संदर्भ में देखते हुए यह प्रतीत होता है कि प्राथमिक विद्यालय एक ऐसी एजेन्सी है जो स्कूली कक्षा में मोटे तौर पर उपलब्धि के एकल सत्ता के आधार पर अंतर करती है, जिसकी विषयवस्तु वयस्क समाज के प्रतिनिधि की कोशिश के रूप में सामने आती है। सामान्य तौर पर कहा जाए तो इस उपलब्धि के पैमाने संज्ञानात्मक या तकनीकी अंग और नैतिक अथवा सामाजिक अंग में अभिन्न रहते हैं। परंतु समाज के मूल्यों को वहन करने के संदर्भ में यह क्षमताओं के स्तर का फर्क है कि इन मूल्यों के आधार पर व्यवहार कैसे किया जाता है। हालांकि संबंध दूर-दूर तक पूरी तरह से एक जैसे नहीं हैं, परन्तु इस तरह के विभेदन वयस्क समाज में प्रस्थिति और भूमिकाओं के स्तरों पर चयन की प्रक्रियाओं को रेखांकित करते हैं।

आगे स्कूल के बाहर ये प्रक्रियाएं कैसे चलती हैं, इस संदर्भ में भी

कुछ कहा जाना चाहिए। स्कूली कक्षा के अलावा दो मुख्य सामाजिक ढांचे हैं, जहां बच्चा अलग-अलग गतिविधियों में शामिल होता है- एक तो है परिवार और दूसरा बच्चे के 'अनौपचारिक दोस्तों का समूह'।

स्कूली कक्षा के संबंध में परिवार और मित्र समूह

स्कूल जाने की उम्र में भी बच्चा अपने अभिभावकों के साथ उनके घर में रहना जारी रखता है और साधनों और भावात्मक स्तर पर उन पर काफी हद तक निर्भर रहता है। लेकिन, अब वह दिन के कई घंटे घर से बाहर बिताता है, जहां अनुशासन और पुरस्कार की अपनी एक व्यवस्था है, जो उसके अभिभावकों द्वारा लागू की गई व्यवस्था से बिलकुल अलग है। जैसे उसकी उम्र बढ़ती है वैसे उसे अभिभावक या स्कूल की देखरेख से बाहर के क्षेत्र तक अपना दायरा बढ़ाने तथा उसमें और गतिविधियां करने की अनुमति दी जाती है। उसे व्यक्तिगत जेबखर्ची के तौर पर पैसे मिलने लग जाते हैं और वह खुद की थोड़ी बहुत कमाई करना शुरू कर देता है। सामान्यतः, इस दौर में हालांकि पर-निर्भरता की समस्या, आमतौर पर उस बच्चे की बाध्यकारी आत्म-निर्भरता के प्रकटीकरण के संदर्भ में प्रमुख समस्या बनकर निरंतर उभरती रहती है।

इसी के साथ, हम-उम्र दोस्तों के साथ जुड़ाव का दायरा बड़ों की बारीक देखरेख के परे बढ़ता जाता है। ये जुड़ाव एक तरफ परिवार के साथ बंधे होते हैं क्योंकि आस-पड़ोस और बगल के गलियों से बच्चे घर और आंगन का इस्तेमाल खेलकूद के लिए करते हैं तो दूसरी तरफ स्कूल के साथ क्योंकि यहीं पर वे अनौपचारिक जुड़ाव खेल के कालांश के दौरान या स्कूल आते-जाते, साथ समय बिताते पैदा होते हैं- भले ही संयोजित गैर-अकादमिक गतिविधियां बाद में जोड़ दी जाती हैं। इस तरह की कुछ गतिविधियां लड़के-लड़कियों के स्काउट संगठनों के जरिए वयस्कों की देखरेख में चलाई जाती हैं।

इस आयु के मित्र समूहों के संदर्भ में दो समाजशास्त्रीय विशेषताएं खासकर उभरती हैं। पहली विशेषता तो उनकी सीमा रेखाओं में पाया जाने वाला लचीलापन है जो बच्चों के उस जुड़ाव में शामिल होने और बाद होने के संबंध में देखा जा सकता है। यह 'स्व-प्रेरित जुडाव' का तत्व परिवार या स्कूल में बच्चे की प्रदत्त सदस्यता जिस पर उसका कोई बस नहीं चलता, बिलकुल अलग होकर उभरता है। दूसरी विशेषता मित्र समूह के लैंगिक आधार पर दिखने वाले कठोर बंटवारे के संदर्भ में है। खास बात तो यह है कि आश्चर्यजनक मात्रा में इसे लागू करने में बड़ों के बजाय बच्चे ही आगे रहते हैं।

मित्र-समूहों के मनोवैज्ञानिक प्रकार्यों को इन दो विशेषताओं के आधार पर समझा जा सकता है। एक तरफ मित्र-समूहों को बड़ों के नियंत्रण से मुक्त होने के प्रयास के रूप में देखा जा सकता है, इसलिए यह कतई आश्चर्यजनक नहीं है कि कई बार आचरण का केन्द्र बिंदु बड़ों के नियंत्रण से मुक्ति पाने के चक्कर में बड़ों द्वारा निषिद्ध व्यवहार के दायरे में पहुंचता है। ऐसा जब होने लगता है तो यही बीजारोपण होता है, जो अतिवादी परिस्थिति में बाल-अपराध तक पहुंचता है। परन्तु दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रकार्य है, बच्चे को अवयस्क मान्यता और स्वीकार्यता प्रदान करने के स्रोत की तरह मित्र-समूह कार्य करते हैं। स्कूली परिस्थिति की तरह ही घुले-मिले स्वरूप में 'तकनीकी' और 'नैतिक' पैमानों पर वे निर्भर होते हैं। मित्र-समूह वह अड्डा है जहां एक तरफ विविध तरह के कारनामे खासकर शारीरिक गुणों के संदर्भ में होते हैं, जो बाद में परिपक्व होकर खेल संबंधी उपलब्धियों की तरफ ले जाते हैं। दूसरी तरफ, यह अपने चहेते मित्रों से स्वीकारोक्ति पाकर समूह में मित्रता पाने की कोशिश है, जो परिपक्व होकर लोकप्रिय किशोर बनाने 'राइट गाई' की अवधारणा में तब्दील होती है। अतः, स्वीकारोक्ति में सुरक्षा और प्रदर्शन हेतु पुरस्कार के स्रोत के रूप में वयस्क अभिभावकों की भूमिका विस्तार पाकर हम-उम्र दोस्तों तक पहुंचती है।

हमारे जैसे समाज में समाजीकरण के लिए मित्र समूहों का महत्त्व समझने की आवश्यकता है। चरित्र के प्रेरणात्मक आधारों की नींव अपरिहार्यतः सबसे पहले अभिभावकों के साथ पहचान से ही डाली जाती है। अभिभावक दरअसल पीढ़ी में श्रेष्ठता का दर्जा रखते हैं और यह पीढ़ी का अंतर एक प्रकार से श्रेणीबद्ध प्रस्थिति के अंतर का उदाहरण है। परंतु, किसी भी व्यक्ति के वयस्क भूमिकाओं के प्रदर्शन के काफी बड़े हिस्से उसकी प्रस्थिति के समरूपों या कम से कम समकक्षों के प्रदर्शन के संबद्ध ही होना होगा। इस परिस्थिति में प्रेरणात्मक ढांचे को पुनर्संगठन करना आवश्यक है ताकि उसकी श्रेणीबद्ध धुरी में मूलतः स्थित वर्चस्व को परिवर्तित कर उसमें समानतावादी हिस्सों को लाया जा सके। इस प्रक्रिया में मित्र समूह महति भूमिका निभाते हैं।

मित्र समूहों के अव्यक्त काल के दौरान के लैंगिक पृथक्करण को लैंगिक भूमिकाओं की पहचान पुनः लागू करने की प्रक्रिया के रूप में देखा जा सकता है। समलिंगी मित्रों के साथ गाढ़े जुड़ाव और विशिष्ट लिंग से जुड़ी गतिविधियों में शामिल होकर व्यक्ति समान लिंग के अन्य सदस्यों के साथ अपनी निजता को और पुख्ता करते हैं और विपरीत लिंग के साथ अपने विभेदों को अधोरेखित करते हैं। शिक्षा प्रदान करने वाले विद्यालयों में यह और भी जरूरी हो जाता है क्योंकि लिंगाधारित भूमिकाओं के अंतर को ढकने या उसके प्रभाव को निष्प्रभ करने का काम करने वाली शक्तियों का समुच्चय वहां सक्रिय होता है। लिंगाधारित भूमिकाओं के प्रारूप का अव्यक्त काल विपरीत लिंग

के सदस्यों के साथ संबंधों को संस्थागत करने की प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के बजाय, इन संबंधों को टालने में परिणित होता है जो कि किशोरावस्था के 'डेटिंग' के दौरान ही जाकर थमता है। यह टालने की प्रवृत्ति कहीं-न-कहीं प्रेरणात्मक ढांचे के कामुक हिस्से के पुनर्संगठन की प्रक्रिया से जुड़ी हुई है। कामुक लगाव उत्पन्न करने वाली पूर्व-इडिपल वस्तुएं आंतरिक परिचय और पीढ़ीगत-श्रेष्ठता इन दोनों का ही एहसास दिलाती थी। इन दोनों ही संदर्भों में, बच्चा जब तक वयस्कता को प्राप्त करता है, मूलभूत अंतर आना जरूरी है। मैं यह सोचता हूं कि इस टालने के प्रारूप में कहीं न कहीं बच्चे को उसके शुरुआती दौर में सगोत्रीय (निषिद्ध संबंधों) लगाव से उभरने में आने वाली मनोवैज्ञानिक कठिनाइयों को पार करने में मदद करने का कार्य प्रमुखता से निभाते हैं ताकि आगे जाकर बच्चा अपने हम-उम्र विपरीत लिंग के व्यक्ति के साथ संबंध प्रस्थापित कर सके।

इस दृष्टिकोण से देखा जाए तो स्कूली कक्षाओं के समाजीकरण के प्रकार्य का विशिष्ट महत्त्व है। इस समय तक परिवार का समाजीकरण के प्रकार्य संबंधी दायरा तुलनात्मक रूप से सीमित हो जाता है। पर फिर भी उसके महत्त्व को हमें कम नहीं आंकना चाहिए। विद्यालय न केवल वयस्कों के नियंत्रण में रहता है, बल्कि बच्चे की इडिपल-पूर्व अवस्था में जिन पहचान पर बल दिया जाता था, उसी तरह उसे स्कूल में भी प्रेरित किया जाता है। कहने का मतलब है कि मनोवैज्ञानिक तौर पर देखें तो उपलब्धियां-प्रेरणाएं, सीखने की प्रक्रिया, शिक्षक की पहचान करने, शिक्षकों को खुश करने के लिए स्कूली गतिविधियों में अच्छा प्रदर्शन, जिसे आमतौर पर अभिभावकों का भी समर्थन प्राप्त होता है; करने से जुड़ी होती हैं, ठीक वैसे ही जैसे बच्चे के पूर्व-इडिपल अवस्था में बच्चा अपनी मां को प्रसन्न करने के लिए नए-नए गुर सीखता है।

इस संदर्भ में मैं इस बात पर कायम हूं कि पहचान की प्रक्रिया के साथ भूमिका संबंधों के पारस्परिक प्रारूप आंतरिक रूप से अपनाए जाते हैं।[8] जब तक अंतःग्रहण की प्रक्रिया पूरी तरह से ही नाकामयाब नहीं हो जाती, एक नहीं बल्कि दोनों तरफ की ही अंतःक्रियाओं को आंतरिक रूप से अपनाया जाएगा। हालांकि, एक या अन्य पर अधिक बांटा दिया जाएगा ताकि कुछ बच्चे समाजीकरण के एजेन्ट के साथ अधिक निकट से जुड़ेंगे और कुछ उसकी विपरीत भूमिका के साथ अधिक निकटता से जुड़ेंगे। इस तरह इडिपल पूर्व की अवस्था में 'आत्म-निर्भर' बच्चे अभिभावकों के साथ खुद को जोड़ेंगे और 'निर्भर' बच्चे अभिभावकों के संदर्भ में बच्चे की भूमिका के साथ पहचान को ग्रहण करेंगे।

स्कूल में शिक्षक संस्थागत रूप से पाठ्यचर्या के अन्तर्गत विषय के ज्ञान और स्कूल में कार्यरत एक अच्छे नागरिक की जिम्मेदारियां निभाने के संदर्भ में किसी भी विद्यार्थी से अधिक श्रेष्ठ माना जाता है। स्कूली कक्षा को अगर दो भागों में बांटा जाता है (और अर्थात् यह द्विभाजन कभी भी पूर्णतः निरपेक्ष नहीं हो सकता) तो वह स्थूलतः इस आधार पर होगा कि एक तरफ तो शिक्षक से एकरूपता महसूस की जाती है और जिसमें कहीं न कहीं उसे एक आदर्श के रूप में स्वीकारने की प्रवृत्ति शामिल रहती है तो, दूसरी तरफ, साथी विद्यार्थीगणों के साथ जुड़ाव शामिल रहता है।

शिक्षकों अथवा साथी समूहों के साथ एकरूपता के आधार पर पहचान स्थापित करने के आधार पर होने वाला स्कूली कक्षा का बंटवारा महाविद्यालय जाने वाले और महाविद्यालय न जाने वालों में होने वाले बंटवारे के साथ इतना हूबहू मेल खाता है कि स्कूली व्यवस्था का संरचनात्मक द्विभाजन चयन के द्विभाजन का प्राथमिक स्रोत है, इस प्राक्कथन को नजरअंदाज करना मुश्किल दिखाई देता है; अर्थात् नजदीकी से देखने पर यह संबंध बहुत ही धुंधला-सा प्रतीत होता है, परंतु अन्य कई सारे क्षेत्रों की तुलना योग्य विश्लेषणात्मक जटिलताओं को देखने पर ऐसा नहीं लगता।

इन सारे मुद्दों के मद्देनजर अमेरिकी समाज में प्राथमिक शिक्षक की भूमिका के संदर्भ में कुछ विशेषताओं की व्याख्या करना संभव है। क्योंकि परिवार के बाहर समाजीकरण का पहला चरण प्राथमिक विद्यालयों में संपन्न होता है, यह स्वभाविक है कि शिक्षक की छवि के बारे में यह अपेक्षा की जाती है कि वह अभिभावकों को छवि से कुछ समानता और कुछ अंतर रखते गुणों के मिश्रण से युक्त हो। फिर शिक्षक एक वयस्क है जिसे बच्चों की तुलना में वयस्क होने के साथ ही उनके अभिभावकों की ही तरह श्रेष्ठत्व की श्रेणी से नवाजा गया है। हालांकि वह अपने विद्यार्थियों के साथ प्रदत्त रूप से संबंधित नहीं है बल्कि वह एक व्यावसायिक भूमिका का निर्वाह करता है। ये ऐसी भूमिका है जिसमें उसकी सेवाओं के लाभार्थी एकात्म रूप से उससे और आपस में जुड़ाव महसूस करते हैं। और तो और अभिभावकों की तुलना में उसकी उन बच्चों के प्रति जिम्मेदारी का स्वरूप काफी हद तक सार्वभौमिक है और इस बात को कक्षा के संख्यात्मक आकार और बच्चों की ''भावनात्मक'' 'जरूरतों' को पूरा करने की अपेक्षा उसका अभिमुखन प्रदर्शन और उपलब्धियों पर होने के कारण पुनः परिलक्षित कर लिया जाता है। शिक्षक ऊंची और कम उपलब्धि पाने वालों में फर्क को इस कारण से दबा नहीं सकता कि ऊंची उपलब्धि पाने वाले समूह में न आने का कमजोर बच्चे को सदमा लग सकता है- हालांकि, इस तरह की प्रवृत्तियां विकृत प्रारूपों को कहीं पैदा करती हैं। दूसरी तरफ मां है जिसका पहला लक्ष्य अपने बच्चों की जरूरतों की तरफ ध्यान देना है- भले ही उपलब्धियां पाने

की उसकी क्षमताएं जैसी भी हों।

परिवार और विद्यालयों के समकक्ष रखते हुए इस बात पर विशेष ध्यान जाता है कि शिक्षक की भूमिका अधिकतर महिलाओं द्वारा निभाई जाती है। पृष्ठभूमि को देखते हुए देखा गया है कि अधिकतर यूरोपियन व्यवस्थाओं में अभी तक और आमतौर पर आज भी हमारे स्थानीय और गैर-पंथीय विद्यालयों में लैंगिक आधारों पर पृथक्करण की प्रक्रिया को जारी रखा गया है और हर एक लिंग समूह को उसी लिंग के शिक्षकों द्वारा पढ़ाया जाता है। सह-शिक्षा के संदर्भ में देखा जाए तो स्त्री शिक्षक मां की भूमिका की निरंतरता को जारी रखती है।

प्राथमिक विद्यालयों में पाठ्यक्रम के अंतर्गत विषयों की विशेषज्ञता और सामाजिक जिम्मेदारी इनके बीच अंतर न किए जाने के कारण स्त्रियोचित भूमिकाओं के फैलाव को अधिक स्थान दिया जाता है।

पर साथ ही इस बात का भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि शिक्षिका अपने विद्यार्थियों की मां की भूमिका में न आए, बल्कि सार्वभौमिक मान्यताओं पर बल दे और उपलब्धियों के आधार पर श्रेय वितरण जारी रखे। सबसे अहम ये है कि वह स्कूली कक्षा में उपलब्धियों की धुरी पर अंतर करना जारी रखे और उसे वैधानिकता प्रदान करे। उसकी भूमिका के इस पक्ष को इस तथ्य से और बल मिलता है कि अमेरिकी समाज में स्त्रियोचित भूमिकाओं का घेरा केवल पारिवारिक दायरे में सिमटा हुआ नहीं है, जैसा कि अन्य अधिकतर समाजों के संदर्भ में देखा जा सकता है, बल्कि वह पुरुषों के साथ व्यावसायिक और संघीय मुद्दों के संदर्भ में कंधे से कंधा मिलाकर चलती हैं- भले ही परिवार के संदर्भ में उनकी भूमिकाओं पर तुलनात्मक रूप से ज्यादा जोर दिया जाता हो। अपनी शिक्षिका के साथ तादात्म्य पाकर दोनों ही लिंगों के बच्चे समझते हैं कि 'औरत' का रूप केवल 'मां' (और बाद में पत्नी) नहीं है, बल्कि स्त्री की भूमिका और व्यक्तित्व उससे अधिक कई जटिलताओं से गुंथा हुआ है।

इस संदर्भ में एक और बात पर गौर किया जाना चाहिए जिसका संबंध एक समय विवादित रहे स्त्री शिक्षकों के विवाह के मुद्दे से जुड़ा हुआ है। स्त्री भूमिका, जिसे मातृत्व की संज्ञा दी जाए, और व्यावसायिक अंगों के पृथक्करण की प्रक्रिया अगर अधूरी और संदिग्ध हो तो उनके बीच होने वाली गफलत टालने के लिए यह सुनिश्चित करना होगा कि दोनों भूमिकाएं एक ही व्यक्ति द्वारा न निभाई जाएं। अमेरिकी परंपरा में पाई जाने वाली 'बूढ़ी आया' शिक्षिका के बारे में सोचा जाता था कि वह व्यावसायिक भूमिका निभाने के लिए अपनी मातृत्व की भूमिका को न्यौछावर कर देती है।[9] हाबार्ट में, हालांकि इस मुद्दे को आस्थाओं के स्तर पर काफी उछाला गया कि विवाहित औरतों द्वारा पढ़ाए जाने को काफी प्रेरित किया गया है और गत कुछ समय से उनकी सहभागिता वास्तविक रूप से काफी बढ़ी है। यह कहा जा सकता है कि यह बदलाव स्त्रियों की बदलती हुई भूमिका के साथ जुड़ा हुआ है जिसका सबसे स्पष्ट स्वरूप श्रमशक्ति में महिलाओं के सहभागिता को मिली सामाजिक स्वीकृति है और वह भी केवल विवाहपूर्व समय में नहीं, विवाहोपरांत के समय में भी। इसे मुझे संरचनात्मक विभेदन की प्रक्रिया के रूप में व्याख्यायित करना चाहिए। इस प्रक्रिया में व्यक्तियों की एक ही श्रेणी को पहले से अधिक जटिल भूमिका प्रकार्यों के समुच्चय के साथ जुड़ने की अनुमति ही नहीं दी गई, बल्कि उनसे यह अपेक्षा भी रखी गई है।

यहां दर्ज की गई शिक्षक के साथ तादात्म्य महसूस करने की प्रक्रिया इस तथ्य से आगे बढ़ती है कि प्राथमिक श्रेणियों में बच्चे को खासकर एक ही शिक्षक पढ़ाता है, ठीक उसी तरह जैसे इडिपल-पूर्व की अवस्था में बच्चा एक ही अभिभावक को पहचानता है, और वह है उसकी मां जिससे उसके सारे वस्तु-संबंधों के संदर्भ जुड़े रहते हैं। इन दोनों अवस्थाओं के बीच की निरन्तरता को इस तथ्य से और बल मिलता है कि शिक्षक भी मां की ही तरह महिला है। लेकिन वह भी अगर मां की ही तरह व्यवहार करे तो विद्यार्थी की व्यक्तित्व व्यवस्था की कोई वास्तविक पहचान संभव नहीं होगी। यह पहचान शिक्षक की भूमिका के उन तत्वों से और स्पष्ट होती है जो मातृत्व से अलग करते हैं। एक और बिंदु ये है कि हालांकि प्रत्येक श्रेणी में बच्चे को एक शिक्षक मिलता है, पर जब वह अगली ऊंची कक्षाओं में प्रवेश करेगा तो उसे प्रायः नया शिक्षक मिलेगा। ऐसे में वह इस तथ्य से समझ लेता है कि मां के विपरीत शिक्षक एक खास अर्थ में 'अंतर्परिवर्तनीय' होते हैं। विद्यालयी वर्ष एक विशिष्ट शिक्षक के साथ अहम रिश्ता बनाने के लिए पर्याप्त होता है, परंतु इतना भी नहीं कि एक खास नजदीकी जुड़ाव घनीभूत हो सके। अभिभावक-शिशु संबंध से ज्यादा; विद्यालय में बच्चा-शिक्षक के व्यक्तित्व से ज्यादा उसकी भूमिका को आत्मसात करता ही है। सार्वभौमिक प्रारूपों के आत्मसातीकरण की दिशा में यह एक महत्त्वपूर्ण कदम है।

प्राथमिक विद्यालय में समाजीकरण एवं चयन

प्राथमिक स्कूली कक्षा के संदर्भ में इस चर्चा को समेटते हुए इस प्रक्रिया को रेखांकित करते हुए कुछ मूलभूत परिस्थितियों के बारे में कुछ कहा जाना चाहिए। जैसा कि हम देख चुके हैं, समानान्तर रूप से ये प्रक्रियाएं 1. बच्चे की अपने परिवार से भावनात्मक जुड़ाव से मुक्ति है। 2. सिर्फ अपने परिवार में जो ग्रहण कर सकता था उससे ऊंचे स्तर के सामाजिक मूल्य और मान्यताओं का आत्मसातीकरण है। 3. वास्तविक उपलब्धियां और उन उपलब्धियों का विभेदी मूल्यमापन

के संदर्भ में होने वाला स्कूली कक्षाओं का विभेदीकरण है। 4. समाज के दृष्टिकोण से वयस्क भूमिकाओं की व्यवस्था के संबंध में मानव संसाधनों का चयन और वितरण है।[10] संभवतः इस प्रक्रिया की सबसे आधारभूत परिस्थिति है दो वयस्क संलग्न एजेंसियों- परिवार और विद्यालय के बीच समान मूल्यों की सहभागिता। इस मामले में उपलब्धियों का साझा मूल्यमापन केंद्र बिंदु है। इसमें सबसे बढ़कर यह स्वीकृति शामिल है कि विभिन्न स्तर की उपलब्धियों को विभिन्न तरह के पुरस्कार सफल लोगों को ऊंचे स्तर के अवसरों की ओर ले जाते हैं। इस तरह से मूल अर्थ में प्राथमिक स्कूली कक्षा अवसरों की समानता के आधारभूत अमेरिकी मूल्य का जीता जागता नमूना है और इसमें प्रारंभिक समानता और उपलब्धियों की भिन्नता पर समान रूप से बल दिया गया है।

दूसरी शर्त के रूप में फिर भी इस मूल्यमापन के प्रारूपों की सख्ती में छोटे बच्चे की जरूरतों और कठिनाइयों को ध्यान रखते हुए थोड़ी ढील देना जरूरी है। यहां शिक्षिका की मां-सरीखी भूमिका काफी अहम रहती है। उसके माध्यम से स्कूल व्यवस्था, अन्य एजेन्सियों की मदद से, सीखने के दबाव के चलते उभरने वाली असुरक्षाओं को कम करने के लिए एक तरह से भावनात्मक संबंध, जो कि उस उम्र के बच्चों के लिए जरूरी माना जाता है, प्रदान करती है। हालांकि इस संदर्भ में स्कूल की भूमिका थोड़ी सीमित रहती है। इस संबल की आधारभूत नींव घर में रखी जाती है और जैसा कि हमने देखा कि इसकी अहम पूर्ति बच्चे के अनौपचारिक मित्र समूहों द्वारा प्रदान की जा सकती है। यह कहा जा सकता है कि स्कूल में अलगाव के तीव्र प्रारूपों का विकास इस संदर्भ में आवश्यक समर्थन न मिलने के साथ आमतौर से जुड़ा होता है।

तीसरी, मौलिक प्रदर्शन को चयनित रूप से पुरस्कृत करने की एक प्रक्रिया होनी चाहिए। यहां शिक्षक निश्चित रूप से एक प्रमुख एजेन्ट है, हालांकि शिक्षा के अधिक प्रगतिशील तरीके पारंपरिक प्रारूपों की अपेक्षा अधिक व्यवस्थित ढंग से कक्षार्थियों की एक सूची बनाने का प्रयास करते हैं। यह प्रक्रिया उपलब्धियों की धुरी पर कक्षा के अन्तर्गत विभेदन का प्रमुख स्रोत है।

सबसे आखिरी शर्त यह है कि इस प्रारंभिक विभेदन से कक्षा में एक प्रस्थिति व्यवस्था लागू होती है जिसमें न केवल विद्यालय के तात्कालिक परिणाम प्रभाव डालते हैं, बल्कि प्रभावों की एक पूरी शृंखला है जो विभिन्न अपेक्षाओं को साथ में मिलाती है, जिसे बच्चों की 'आकांक्षाओं के स्तर' के रूप में समझा जा सकता है। सामान्यतया, इस संदर्भ में मित्रता-समूहों के बीच कुछ भिन्नताएं उभरती हैं- हालांकि यह महत्त्वपूर्ण है कि यह अपने-आपमें परिपूर्ण नहीं होती और बच्चे न केवल अपने मित्रों के बल्कि दूसरों के रुख के प्रति भी संवेदनशील होते हैं।

प्रक्रियाओं और परिस्थितियों की इस सामान्य परिचर्चा के बीच, व्यक्ति के समाजीकरण और भावी भूमिकाओं के हेतु पुरस्कारों के चयनित वितरण के मध्य अंतर किया जाना जरूरी है, जैसा कि मैं लगातार करने की कोशिश करता रहा हूं। व्यक्ति के लिए पुरानी पारिवारिक पहचान ढह जाती है (इंडियन परिभाषा में अभिमुखी परिवार एक 'लुप्त तत्व' बन जाता है) और श्री अमुक के सुपुत्र या सुपुत्री के रूप में प्रदत्त मूल पहचान से हटकर बच्चे की पहचान की संरचना का पहला आधार प्रदान करते हुए धीरे-धीरे एक नई पहचान आकार लेती है। वह एक स्वतंत्र पहचान पाने के लिए अपनी पारिवारिक पहचान से प्रस्थान करता है और नई व्यवस्था में विभेदित प्रस्थिति अर्जित करने की स्थिति में आता है। प्राथमिक रूप से औपचारिक स्कूली कक्षा में और द्वितीयक रूप से अनौपचारिक मित्र समूह संरचना में उसकी व्यक्तिगत प्रस्थिति उसके अर्जित स्थान का अपरिहार्यतः प्रत्यक्ष प्रभाव है। हालांकि इस अर्थ में उपलब्धि के आधार पर स्थान पाना अनवरत रूप से जारी रहता है। मैंने इस प्रस्थिति के संदर्भ में कुछ कारण सामने रखे हैं जो ये सूचित करते हैं कि दो स्थूल और अपेक्षाकृत भिन्न स्तरों पर महत्त्वपूर्ण विभेदन होता है और कहीं न कहीं उसका स्थान उसकी खुद की पहचान के संदर्भ में व्यक्ति की व्याख्या के साथ जुड़ जाता है। काफी हद तक यह विभेदन की प्रक्रिया समुदाय में परिवार की सामाजिक-आर्थिक प्रस्थिति, जो बच्चे के लिए उसकी प्रारंभिक प्रदत्त प्रस्थिति है, से स्वायत्त होती है।

जब हम इसी व्यवस्था को समाज के दृष्टिकोण से चयन की प्रणाली के रूप में देखते हैं तो हमें कुछ और बातों पर भी विचार करना जरूरी हो जाता है। सबसे पहले इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिए कि उपलब्धियों का मूल्यमापन और परिवार और विद्यालय द्वारा उसका साझा न केवल व्यक्तियों को आत्मसात करने के लिए उपयुक्त मूल्य प्रदान करता है, बल्कि व्यवस्था के लिए एकीकरण महत्त्वपूर्ण प्रकार्य को अंजाम देता है। उपलब्धियों की धुरी के आधार पर स्कूली कक्षा में विभेदन अपरिहार्य रूप से तनाव का स्रोत है क्योंकि इसके तहत एक ही व्यवस्था में एक हिस्से पर दूसरे से ज्यादा ऊंचे पुरस्कार और सुविधाएं बरसाई जाती हैं। साझा मूल्यमापन इस निर्णायक विभेदन को खासकर इस स्पर्धा में हारे हुए लोगों द्वारा स्वीकार्य बनाता है। यहां अहम बिंदु यह है कि उपलब्धियों का मूल्य, व्यवस्था में विभिन्न प्रस्थिति इकाइयों द्वारा सामूहिक तौर पर स्वीकारा जाता है। यह सामाजिक-आर्थिक विवरण है। प्रस्थितियों के आधार पर परिवारों को विभेदन को लांघता है। यह जरूरी है कि वास्तविक अवसर हो और शिक्षक पर न्यायोचित होने के संदर्भ में भरोसा किया

जा सके और जो भी उपलब्धि पाने की क्षमता रखे उसे वह पुरस्कृत करे।

विभेदन से उत्पन्न तनावों को दूर करने के लिए साझा मूल्यों से प्रतिबद्धता ही एकीकरण की प्रणाली के रूप में एकमात्र प्रणाली है। विद्यार्थी व्यक्तिगत तौर पर न केवल अपने परिवार का समर्थन पाता है, बल्कि शिक्षक उसकी उपलब्धियों के आधार पर उसकी प्रस्थिति और मित्र-समूहों में उसकी मित्रता के आधार, इनसे परे जाकर स्वतंत्र रूप से विद्यार्थियों को चाहता है और उनका आदर करता है। यह भाव भले ही उपलब्धियों के आधार पर उसके अर्जित स्थान से कुछ हद तक प्रभावित होता हो, परंतु यह पूरी तरह इस आधार के अनुरूप हो यह जरूरी नहीं- बल्कि कई बार इन नियत रेखाओं को लांघकर वह अभिव्यक्त होता है। इस तरह, परस्पर छेद देने वाले सामाजिक जुड़ाव की रेखाएं होती हैं जो कि उपलब्धियों को विभेदित रूप में पुरस्कृत करने की प्रक्रिया के चलते उभरने वाले तनाव राहत दिलाती है।[11]

संस्थागत जुड़ाव के इस दायरे में ही चयन की निर्धारक प्रक्रिया चलती रहती है। यह प्रक्रिया स्कूली कक्षा में चुनिंदा पुरस्करण और उनके निर्णयों को सामाजिक विभेदन में संचित करते हुए चढ़ाई जाती है। सापेक्षतः ऊंची क्षमताएं रखने वाले किंतु कमजोर प्रस्थिति की पारिवारिक पृष्ठभूमि से आने वाले बच्चों पर इस चयन प्रक्रिया का क्या प्रभाव रहता है, इस पर हमने विशेष गौर करने को कहा है। इस समूह में ही खासकर, मतदान की प्रक्रिया में मतदान संबंधी आचरण में जो समानांतरता पाई गई, उसे देखना संभव है और जो सारी स्कूल कक्षाओं पर भी लागू होता है।

मतदान संबंधी अध्ययन में यह पाया गया था कि 'बदलू' मतदाता यानी जो एक पार्टी से दूसरी महत्त्वपूर्ण पार्टी की तरफ अपना रुझान बदलते हैं, वे आमतौर पर एक तरफ 'समिश्र दबाव झेलने वाले' लोग होते हैं जिनके पास बहु-प्रस्थिति विशेषताएं और समूह गठबंधन होते हैं, जो उन्हें एक ही समय परस्पर वितरित पार्टियों को मत देने के लिए बाध्य करते हैं। स्कूली कक्षा के संदर्भ में इसकी समरूपता उन बच्चों के संदर्भ में सामने आती है जिनकी क्षमताएं और पारिवारिक पृष्ठभूमि परस्पर मेल नहीं खाती। दूसरी तरफ इसी 'समिश्र दबाव झेलने वाले' समूह में राजनैतिक उदासीनता सर्वाधिक रूप से व्याप्त रहती है। मतदान न करने की प्रवृत्ति इस समूह में सर्वाधिक पाई गई जैसे कि कैम्पेन के प्रति सामान्यतया मानविक स्तर पर चलताऊ प्रवृत्ति पाई जा रही थी। कहने का अर्थ यह है कि कुछ विद्यार्थियों में स्कूल में उपलब्धियां पाने के संदर्भ जो 'उदासीनता' देखी जाती है, कहीं न कहीं उसका भी मूल इसी तरह के तत्व के साथ जुड़ता होगा। यह एक जटिल परिघटना है और यहां उसका संपूर्ण विश्लेषण करना संभव नहीं है। परन्तु यह कहने के बजाय कि विद्यालयी कार्य के प्रति उदासीनता सांस्कृतिक और बौद्धिक मूल्यों से 'अलगाव' प्रदर्शित करती है, जो आमतौर पर उभरने वाला सहज बोध है, मैं इसके ठीक विपरीत कहना चाहूंगा कि इस उदासीनता का महत्त्वपूर्ण अंग, विद्यालयी अनुशासन के खिलाफ खुला विद्रोह करने वाले चरम मामलों में भी जो सामने आता है वह इस तथ्य के साथ जुड़ा है कि राजनीति की ही तरह यहां भी कई सारी चीजें दाव पर लगी रहती हैं। परस्पर विपरीत दबावों का सामना जिन विद्यार्थियों को करना पड़ता है उनकी दुविधा में रहने की संभावनाएं अधिक हैं, साथ ही, उनके लिए ज्यादा चीजें दाव पर लगी हैं क्योंकि विद्यालय में जो भी होगा, उसका उनके भविष्य पर अन्य की अपेक्षा गहरा असर होगा- खासकर उनके बनिस्बत जिनकी क्षमताएं और पारिवारिक प्रस्थिति भविष्य के प्रति समान अपेक्षाएं लक्षित करती हैं। खासकर ऊर्ध्वगामी गतिशील विद्यार्थियों के लिए, स्कूली सफलता पर अत्यधिक बल का मतलब होगा कि अपने परिवार और प्रस्थिति के साथीगण से 'संपर्क-सूत्रों को तोड़ा' जाए। यह परिघटना प्राथमिक विद्यालयों में भी घटती नजर आती है, हालांकि बाद में इसकी व्याप्ति और व्यापक हो जाती है। सामान्यतः, मैं सोचता हूं कि, अमेरिका की युवा संस्कृति में उभरते बौद्धिकता-विरोध का बड़ा हिस्सा शिक्षा-व्यवस्था की चयनात्मक प्रक्रिया के महत्त्व के चलते है, न कि इसके विपरीत।

इस विश्लेषण में एक और महत्त्वपूर्ण बिंदु का उल्लेख किया जाना चाहिए। जैसा कि हमने देखा है, अमेरिकी समाज की सामान्य प्रवृत्ति लोगों की शैक्षिक प्रस्थिति में तीव्र उन्नयन की दिशा में रही है। इसका अर्थ है कि अतीत की अपेक्षाओं की तुलना में, हरेक पीढ़ी के साथ शैक्षिक उपलब्धियां पाने का दबाव बढ़ा है, जो अभिभावकों की अपने बच्चों के संदर्भ व्यावसायिक महत्त्वाकांक्षाओं से जुड़ा है। एक समाजशास्त्री के लिए, यह कमोबेश मानक शून्यता के तनाव की अदर्श परिस्थिति है और युवा संस्कृति की विचारधारा, जो विद्यालयी प्रदर्शन और बौद्धिक रुचियों को कम आंकती है, इस संदर्भ में सटीक साबित होती है। युवा संस्कृति का अभिमुखन मामले की प्रकृति के संदर्भ में दुविधात्मक होता है, परन्तु, सुझाए गए कारणों के अनुसार दुविधा का बौद्धिक-विरोधी पक्ष खुले रूप से दबाव में होता है। स्कूल-विरोधी विचारधारा के इतने प्रभावी होने के पीछे के कारणों में से एक यह भी है कि यह समाजीकरण की परिस्थिति में विरोधी ध्रुव पर बड़े वयस्कों से प्रतिरोध का एक जरिया बनती है। कुछ संदर्भों में यह अपेक्षा की जा सकती है कि आत्म-निर्भरता पर अधिक बल देने की जो प्रवृत्ति है, जिसे हमने प्रगतिशील शिक्षा के साथ जोड़कर देखा है, इस संदर्भ में तनाव बढ़ा देगी और इसके

चलते वयस्कों के अपेक्षाओं की अवमानना करने की प्रवृत्ति भी बढ़ेगी। इस पूरे प्रश्न पर गहन विमर्श की आवश्यकता है- खासकर विचारधाराओं के संदर्भ में हमारी सामान्य जानकारी के दायरे में।

बहुचर्चित बाल अपराध की समस्या के संदर्भ में यही विचार-बिंदु प्रासंगिक है। सामान्य उन्नयन की प्रक्रिया और वृहत्तर आत्म-निर्भरता का दबाव निचले सबसे हाशिए के समूहों में तनाव बढ़ाएगा, ऐसी अपेक्षा की जा सकती है। यह आलेख महाविद्यालय जाने वाले और महाविद्यालय न जाने वालों के समूहों के बीच की निर्धारक रेखा से वास्ता रखता है- हालांकि यहां एक और निर्धारक रेखा गैर-महाविद्यालयी शिक्षा की ठोस प्रस्थिति अर्जित करने वालों और जिनके लिए शैक्षिक अपेक्षाओं की पूर्ति करना किसी भी स्तर पर मुश्किल पाने वालों के बीच दिखाई देती है। न्यूनतम शैक्षिक स्वीकार्य पात्रता का स्तर ज्यों-ज्यों बढ़ता जाता है, त्यों-त्यों सीमा रेखाओं के करीब के और उससे नीचे के लोगों में उन अपेक्षाओं को खारिज करने का नजरिया अपनाने को बाध्य होने की संभावना रहती है।

परिस्थिति और क्षमताओं के वितरण में निम्न स्तर की संख्या में वृद्धि शैक्षणिक प्रक्रिया के असफलता का द्योतक है जिसका प्रमुख कारक समाज में वृहद स्तर हुई शैक्षणिक मानकों की उन्नति है। इसीलिए विचलन को शैक्षणिक प्रक्रिया की संपूर्ण असफलता का लक्षण आसानी से नहीं मान लेना चाहिए।

माध्यमिक विद्यालयों में विभेदन और चयन

प्राथमिक विद्यालयों के स्तर पर जितने सूक्ष्म तरीके से विवेचन किया गया, उतना माध्यमिक विद्यालयों के स्तर पर करना संभव नहीं है। परंतु, उपरोक्त विश्लेषण को वृहद संदर्भों में रखने के लिए उसकी एक मुख्य रूपरेखा बनाना उपयोगी साबित होगा। मोटा-मोटी हम यह कह सकते हैं कि उपलब्धियों और विविध क्षमताओं के आधार पर उपलब्धि के लिए लोगों के चयन की प्रेरणाओं को बच्चों द्वारा आत्मसात करना प्राथमिक विद्यालय के स्तर मुख्य उद्देश्य होता है। क्षमताओं का स्तर ध्यान का केन्द्र बिंदु रहता है। दूसरी तरफ माध्यमिक विद्यालय स्तर पर उपलब्धि के गुणात्मक प्रकारों के विभेदन पर ध्यान केन्द्रित रहता है। जैसे प्राथमिक विद्यालय के स्तर पर इस तरह का विभेदन लैंगिक भूमिकाओं को काट-छांट देता है, मुझे यह स्पष्ट कर देना चाहिए कि, यह प्राथमिक विद्यालयों में उपलब्धियों के स्तरों का जो विभेदन होता है, उसमें भी काट-छांट कर देता है।

क्षमताओं के प्रकारों में अंतर करने के सवाल पर विचार करते वक्त यह ध्यान रखना चाहिए कि माध्यमिक विद्यालय वह प्रवेश द्वार है जहां से निम्न प्रस्थिति लोग श्रमिक शक्ति का हिस्सा बनेंगे जबकि उच्च प्रस्थिति की पृष्ठभूमि से आने वाले व्यक्ति उच्च शिक्षा के लिए महाविद्यालयों और कुछ उससे भी ऊंचे स्तर पर औपचारिक शिक्षा को जारी रखेंगे। अर्थात्, निम्न प्रस्थिति के विद्यार्थियों के लिए विभेदन की मुख्य रेखा वह होगी जो नौकरी के अलग-अलग पायदानों की ओर ले जाएगी तो उच्च प्रस्थिति के विद्यार्थियों के लिए विभेदन महाविद्यालय में भिन्न भूमिकाओं का निर्धारण करेगा।

मेरा सुझाव है कि यह विभेदन उपब्धियों के उन दो अंगों को बांटता है जिन्हें हमने बहस की शुरुआत में 'संरचानात्मक' और 'नैतिक' की संज्ञा दी थी। तुलनात्मक रूप से ऊंची 'संरचनात्मक' उपलब्धियां रखने वाले कमोबेश रूप से 'तकनीकी' भूमिकाओं से जुड़े विशिष्ट कार्यों के लिए फिट होते हैं और जिनकी 'नैतिक' उपलब्धियां तुलनात्मक रूप से ऊंची होती हैं वे 'सामाजिक' या 'मानवीय' अभिमुखन की भूमिका निभाने के लिए सक्षम होंगे। जिन कामों के लिए महाविद्यालयी प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती उनमें से कुछ तो अवैयक्तिक और तकनीकी व्यवसायों से जुड़े हैं जैसे 'तंत्रज्ञ' या मैकेनिक या लिपिक, अन्य व्यवसाय जिनमें 'मानवीय संबंधों' को महत्त्व दिया जाता है जैसे सेल्समेन या विभिन्न प्रकार के एजेन्ट से जुड़े होते हैं। महाविद्यालयी स्तर पर विभेदन का प्रमुख संबंध जुड़ा होता है। एक तरफ महाविद्यालय के पाठ्यक्रमों से जुड़े बौद्धिक कार्य से और दूसरी तरफ मानवीय संबंधों में विभिन्न प्रकार की व्यापक जिम्मेदारी संबंधी भूमिकाओं- जैसे विद्यार्थी सभा में नेतृत्व की भूमिकाओं और खेलकूद, कला संबंधी गैर-आकादमिक गतिविधियों से। और फिर स्नातकोत्तर व्यावसायिक प्रशिक्षण के लिए उम्मीदवार इन दोनों समूह से पहले समूह से जुटाए जाएंगें।

विद्यालय की संरचना में शुरुआती कक्षाओं से हाईस्कूल तक धीरे-धीरे स्थिति में अन्तर होना दिखाई देता है। विभिन्न स्कूली व्यवस्थाओं में अलग-अलग समय परिवर्तन होते हैं। इस बहस की शुरुआत में जिस संरचना पर जोर दिया गया था वह स्पष्ट रूप से 'प्राथमिक' स्तर पर तीन कक्षाओं में दिखाई देता है। जैसे-जैसे ऊंची कक्षाओं की तरफ बढ़ते हैं तो शिक्षकों की बहुलता की बारंबारिता बढ़ती है। फिर भी, कई बार सामान्यरूप से एक मुख्य शिक्षक रहता है। छठी कक्षा में और कई बार पांचवीं में ही, मुख्य शिक्षक के तौर पर पुरुष होना असामान्य होते हुए भी अघटित माना नहीं जा सकता। हाईस्कूल के प्रांरभिक चरण में प्रारूपों में परिवर्तन अधिक स्पष्ट होता है और सीनियर स्तर पर उससे भी ज्यादा स्पष्ट होता जाता है।

महाविद्यालय की तैयारी करवाने वाले कोर्सेज और अन्य में विभिन्न विषय जो कि विभिन्न पाठ्यक्रमों का हिस्सा हैं, दोनों ही के विभिन्न शिक्षकों से विद्यार्थी पढ़ना शुरू कर देते हैं। और तो और, 'ऐच्छिक' विषय चुनने के विकल्प के चलते कक्षा के विद्यार्थी-गण हमेशा पब्लिक

माध्यमिक स्कूलों के पढ़ाने वाले कर्मचारियों में से लगभग आधे यानी (49%) पुरुष हैं (बाइनियल सर्वे ऑफ एज्युकेशन इन दी यूनाइटेड स्टेटस् 1954-56, ऊपर उद्धृत, अध्याय-11)। हर कालांश में वही हो, यह जरूरी नहीं। ऐसे में विद्यार्थी भी अलग-अलग संदर्भों में वयस्क और सम-वयस्क साथी गणों दोनों ही समूहों से अलग-अलग लोगों के साथ जुड़ाव विकसित करने के लिए व्यवस्थित ढंग से तैयार हो जाते हैं। साथ ही प्राथमिक विद्यालय से माध्यमिक विद्यालय आकार में तो बड़ा होता ही है, परंतु उसके भौगोलिक क्षेत्र का दायरा भी जहां से विद्यार्थी आते हैं, अधिक विस्तृत होता है। इस तरह बच्चा प्रस्थिति के विस्तृत दायरे से मुखातिब होता है क्योंकि विद्यालय में इस स्तर पर उसके साथ में पढ़ने वाले उसके आस-पड़ोस से ही आते हों, यह कतई जरूरी नहीं और उनके अभिभावक अन्य विद्यार्थियों के अभिभावकों से परिचित हों, इसकी संभावना और भी कम है। ऐसे में मुझे लगता है कि जूनियर हाईस्कूल से सीनियर हाईस्कूल में होने वाले स्थिति में अन्तर का अर्थ होगा कि दोस्तियों में काफी सारे फेरबदल होंगे। दूसरा महत्त्वपूर्ण फर्क यह है कि प्राथमिक स्कूल की अपेक्षा हाईस्कूल स्तर पर खेलकूद से संबंधित शिक्षातिरिक्त गतिविधियां अधिक संघटित रूप से होती हैं। अब पहली बार संघटित एथेलेटिक्स महत्त्वपूर्ण गतिविधि के रूप में सामने आती है और उसी तरह स्कूल द्वारा प्रायोजित और संचालित विभिन्न क्लब और समितियां भी महत्त्वपूर्ण भूमिकाएं निभाती हैं।

इस दौरान दो महत्त्वपूर्ण परिवर्तन युवा संस्कृति के प्रारूपों में सामने आते हैं। एक तो है कि नृत्य, डेटिंग और इसी तरह की गतिविधियों के माध्यम से विपरीत लिंग संबंध सकारात्मक रूप से कक्षा के बाहर पनपने लगते हैं। दूसरा यह कि अनौपचारिक मित्र संबंधों के समूहों में काफी तीव्र किस्म का सम्मान-स्तरण उभरता है, जिसमें एक प्रकार का दंभ शामिल होता है जिसकी मात्रा विद्यालय जिस वयस्क समुदाय का हिस्सा है, उसे भी पार कर जाती है। मित्रता समूहों की प्रतिष्ठा और उनके सदस्यों के परिवारों की प्रस्थिति में परस्पर संबंध होते हुए भी, विद्यालयों की उपलब्धि श्रेणियों की तरह समुदायों के स्तरण श्रेणियों यह केवल 'प्रतिबिंब' नहीं होता क्योंकि काफी संख्या में निम्न प्रस्थिति के बच्चे भी उन समूहों का हिस्सा बन जाते हैं जिनके अन्य सदस्यों की पारिवारिक प्रस्थिति उनसे कहीं अधिक ऊंची है। इस तरह यह स्तरीय युवा व्यवस्था असली चयनशील प्रणाली की तरह काम करती है और केवल प्रदत्त प्रस्थिति को केवल पुनः प्रस्थापित नहीं करती।

अन्य समाजों की तुलना में इस युवा संस्कृति को अमेरिकी माध्यमिक विद्यालय में मिलने वाला प्राधान्य अमेरिकी शैक्षिक व्यवस्था का मानचिह्न बन चुका है; अधिकतर यूरोपियन व्यवस्थाओं में इसे काफी कम प्राधान्य दिया जाता है। यह कहा जा सकता है कि स्कूली कक्षा और शुरुआती दौर के मित्र-समूह के ढांचे का प्राथमिक विद्यालय में एक संरचनात्मक संमिश्रण तैयार किया जाता है। ऐसा साफ नजर आता है कि जिन्हें मैं 'मानवीय संबंधों' से अभिमुख वाले माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की आकस्मिकता कहता हूं, वे शिक्षातिरिक्त गतिविधियों में अग्रसर और अधिक क्रियाशील होते हैं और यह उन्हें, अधिक अवैयक्तिक रूप और तकनीकी रूप से अभिमुखन समूह से अलग करने वाला मुख्य कारक है। मानवीय संबंधों की आकस्मिकता में पाए जाने वाली प्रमुख विशेषताओं के बारे में सोचे तो उन्हें 'लोकप्रियता' बढ़ाने वाली विशेषताओं की श्रेणी में रखा जा सकता है। मेरा सुझाव यह है कि माध्यमिक विद्यालय के चयन संबंधी प्रकार्य के पक्ष से देखा जाए तो युवा संस्कृति (उदाहरण के लिए देखें सी. डब्ल्यू. गॉरडन. दी सोशल सिस्टम ऑफ दी हाईस्कूलः ए स्टडी इन सोशॅलोजी ऑफ अडॉलसन्स, ग्लेन्को 3 : फ्री प्रेस, 1957) मोटा-मोटी उन व्यक्ति रेखाओं के विभिन्न प्रकारों में अंतर करने में मदद करती है, जो वयस्कों की भिन्न प्रकार की भूमिकाएं निभाती हैं।

युवा समूहों के स्तरीकरण का प्रकार्य चयनात्मक होता है; उपलब्धि की श्रेणी और समुदाय की वयस्कों के स्तरीकरण व्यवस्था के बीच सेतु का काम करता है। परंतु इसका एक और प्रकार्य है। स्कूल में कार्य प्रदर्शन के आधार पर चिह्नित होने वाली उपलब्धि की श्रेणी के अनुपात में और उससे स्वायत्त होकर प्रतिष्ठा का केन्द्र बिंदु सामने आता है। अनौपचारिक युवा समूहों में प्रतिष्ठा मिलना अपने-आपमें एक मौलिक उपलब्धि है। इसीलिए समाज में जिन व्यक्तियों की ऊंची प्रस्थिति होना विधि निहित है, उनके मोटा-मोटी दो प्रकार देखे जा सकते हैं। जिनका स्कूली कार्य प्रदर्शन कमोबेश श्रेष्ठतर रहा है और जिनकी अनौपचारिक प्रतिष्ठा तुलनात्मक रूप से समाधानकारक है और दूसरी तरफ, वे जिनकी अनौपचारिक प्रतिष्ठा श्रेष्ठतर है और स्कूली प्रदर्शन समाधानकारक है। दोनों में से किसी एक स्थिति में न्यूनतम अपेक्षित स्तर से कम उपलब्धि की स्थिति में बच्चे के उच्चतर समूह में शामिल होने के अवसर डगमगा जाएंगे। यहां पर यह महत्त्वपूर्ण बिंदु है कि यहां कॉलेज का रास्ता सीधा पकड़ने वाले उन मित्र-समूहों का हिस्सा होते हैं, जो पढ़ाई में अधिकतर कम ध्यान देते हुए भी यह मानकर चलते हैं कि अच्छे महाविद्यालय में प्रवेश पाने के लिए जिस स्तर की विद्वतापूर्ण उपाधि चाहिए होती है उसे अधिक मजबूती से लागू करते हैं। जो इन मानकों को अपने प्रदर्शन में बरकरार नहीं रख पाते वह दबाव में आ जाते हैं।

याद होगा कि प्राथमिक विद्यालय के संदर्भ में बात करते वक्त हमने इस बात पर जोर दिया था कि परिवार से पहली बार बच्चा अलग होता है तो उसकी भावनात्मक निर्भरता के आधार के रूप में मित्र-समूह

काम करता है। इसीलिए विद्यालयी उपलब्धियों के दबाव के संबंध में आंशिक रूप से ही सही पर बच्चा जिससे समाजीकृत होने की प्रक्रिया में आया उस निम्न स्तर की प्रेरणात्मक व्यवस्था की अभिव्यक्ति यह समूह प्रस्तुत करता है। कुमारावस्था की युवा संस्कृति के संदर्भ में उसके अपने स्तर पर भी इसी तरह की बात कही जा सकती है; कुछ मायनों में यह प्रत्यात्मक प्रेरणाओं की अभिव्यक्ति है। वयस्क भूमिकाओं के लिए प्रासंगिकता न होने के बावजूद एथेलेटिक्स पर जोर दिया जाना, एक ही लिंग में छुपी ''समलैंगिक'' अंतर्निहित ध्वनि और विरोधी लिंग के प्रति 'गैर-जिम्मेदाराना' नजरिया-उदाहरण के लिए लड़कियों के प्रति लड़कों का दमनकारी रवैए के तत्व नजरिए में दिखना आदि सभी के लिए यह सच है। हालांकि यह पूरी दास्तां नहीं है। युवा संस्कृति, बिना किसी तात्कालिक पर्यवेक्षण या निष्कर्षों को स्वीकारने संबंधी सीख के मानवीय संबंधों की नजाकत को संभालने के लिए ऊंचे दर्जे की जिम्मेदारी के गृहीत तत्वों को व्यवहार में लाने का उपयुक्त स्थान है। इस संदर्भ में, 'मानवीय संबंधों' के विशेषज्ञता रखने वाले जिन समूहों की हमने बात की थी, उनके लिए तो यह खासतौर पर विशेषरूप से महत्त्वपूर्ण है।

युवा संस्कृति के इन प्रारूपों को तीन विभिन्न स्तरों पर स्पष्ट रूप से अंतर कर देखा जा सकता है। मझला स्तर वह है जहां सम-वयस्क प्रस्थिति के स्तर पर बिना किसी भेद के शामिल किए जाते हैं। यहां दो मुख्य कुंजियां हैं, सामान्य मित्रतापूर्ण व्यवहार के स्तर पर एक 'अच्छे व्यक्ति' के रूप में पहचान बनाना और अनौपचारिक सामाजिक परिस्थितियों में जहां कुछ करने की आवश्यकता है, वहां जिम्मेदारी उठाने के लिए तैयार रहना। इसके ऊपर के स्तर पर हम उच्च स्तरीय 'श्रेष्ठतर' लोकप्रियता और किसी व्यक्ति के 'नेतृत्व' गुणों की बात कर सकते हैं, जहां असामान्य जिम्मेदारियों के उठाने के प्रति उसका रुझान हो। और मझले स्तर से नीचे के स्तर पर वे युवा प्रारूप सम्मिलित किए गए हैं जैसे बाल अपराधी, प्रत्याहारी या सामान्यतया अस्वीकार्य व्यवहार की सीमा-रेखा पर जो आचरण के प्रारूप हैं। केवल यह आखरी वाला स्तर है जो 'प्रत्यावर्ती' रूप में विशिष्ट आयु-मर्यादा के समूह से योग्य व्यवहार की अपेक्षाओं से संबंध रखता है। इन तीनों स्तरों की छानबीन करते हुए सूक्ष्म भेदों के लिए कुछ छूट तो देनी ही होगी। कुमार इस अस्वीकार्य व्यवहार संबंधी सीमा-रेखाओं के संदर्भ में कुछ नवाचार को अपनाने की कोशिश में रहते हैं और यह कुछ हद तक वयस्कों से आत्म-निर्भरता के संबंध में आने वाले दबाव के तहत तो कुछ हद तक सम-वयस्कों के प्रोत्साहन में होने वाले 'गठजोड़' के तहत किया जाता है। सवाल यह है कि क्या यह 'प्रत्यावर्ती' व्यवहार पूरे व्यक्तित्व के प्रारूपों पर कोई असर डालता है ? इस परिप्रेक्ष्य से देखने पर यह कहना उचित होगा कि मझले और ऊंचे प्रारूप ही प्रबल हैं और कुमारों का एक छोटा हिस्सा ही पूरी तरह से अस्वीकार्य व्यवहार को अपने जीवन शैली का हिस्सा बनाते हैं। एक विशिष्ट आयु-वर्ग में भले ही इस छोटे हिस्से का अनुपात निरंतर बना रहा हो, परंतु कुछ खास तरह के सामाजिक विघटन की परिस्थितियों को छोड़कर इस तरह के तथ्य सबूत के तौर पर सामने नहीं आते, जिनके आधार पर बीते कुछ वर्षों में इनके लगातार बढ़ने की पुष्टि की जा सके।

युवा संस्कृति में पाए जाने वाले समिश्र-लिंग संबंधों के प्रारूप स्पष्ट रूप से भविष्य में होने वाले विवाह और परिवार संबंधों की निर्मिति की प्रक्रिया पर अपनी छाप छोड़ते हैं। विद्यालय में ये इतने प्रधान रूप से तैयार होते हैं कि हमारे समाज में विवाह में साथी के चुनाव के संदर्भ में अन्य प्रदत्त प्रभाव, जिनमें अभिभावकों का प्रत्यक्ष दबाव भी शामिल है, का जोर तथ्यात्मक रूप से निष्प्रभ होता दिखाई देता है। लड़की के लिए यह और भी महत्त्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि उसे लगातार इसके बारे में याद दिलाया जाता है कि उसकी वयस्क प्रस्थिति काफी हद तक उसके विवाह और परिवार से संलग्न रहेगी। लड़की के लिए यह मूलभूत अपेक्षाएं, शैक्षिक स्तर पर सह-शिक्षा के दौरान लैंगिक विभेदीकरण न होने के कारण तनावपूर्ण रहती हैं। यह तनाव सह-शिक्षा की व्यवस्था से है। परंतु अमेरिकी समाज में स्त्री की भूमिकाएं अभी भी मूलभूत रूप से विवाह और परिवार की भूमिकाओं संलग्न होने के कारण सह-शिक्षा के महत्त्व को कम आंकना नहीं चाहिए। सबसे अहम् बात तो यह है कि परिवार के अलावा अन्य व्यावसायिक क्षेत्रों में और सामुदायिक मामलों में स्त्रियों का योगदान लगातार बढ़ रहा है और उनके इस अवदान में उनमें शिक्षा का स्तर निरंतर रूप से बढ़ रहा है। साथ ही स्त्रियों की पारिवारिक भूमिकाओं को समाज की सांस्कृतिक जरूरतों से संपूर्णतः अलग करके देखना नहीं चाहिए। शिक्षित महिला की एक पत्नी और मां के रूप में भूमिका अहम् होती है- खासकर बच्चों के संदर्भ उन्हें विद्यालय में जाने के लिए प्रोत्साहित करना और उनके मन में शिक्षा के महत्त्व को अंकित करना। मुझे लगता है कि मोटा-मोटी यह सही है कि परिवार प्रबंधन की तात्कालिक जिम्मेदारियों को निभाने में महिलाओं की भूमिका बढ़ रही है, लेकिन मैं अभी इस बारे में थोड़ा असमंजस में हूं कि अमेरिकी पुरुषों ने इन भूमिकाओं के संदर्भ में पूरी तरह से 'पदत्याग' कर दिया है। किंतु विशेष रूप से महिलाओं की बढ़ी हुई पारिवारिक जिम्मेदारियों के संदर्भ में, समाजीकरण के वाहक और आदर्श इन दोनों ही रूपों में मां का प्रभाव महत्त्वपूर्ण है। इस प्रभाव का मूल्यांकन सामान्य उन्नयन की प्रक्रिया को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। अन्य किसी बात पर गौर न करें तो भी यह काफी संदेहास्पद है कि मां के

रूप में बच्चों को प्रभावित करने वाली औरतों की पर्याप्त उच्च शिक्षा के बिना समान्य प्रक्रिया के प्रेरक पूर्व-शर्तों को निभा पाना संभव है।

निष्कर्ष

अमेरिकी समाज में एक शताब्दी से अधिक समय से चलने वाली सामान्य सांस्कृतिक उन्नयन की प्रक्रिया के चलते शिक्षा व्यवस्था की भूमिका और अधिक महत्त्वपूर्ण बनती जा रही है। यदि ऐसा है तो यह मेरी राय में समाज में संरचनात्मक विभेदन की सामान्य प्रवृत्ति का परिणाम है। तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो स्कूल एक विशेषीकृत एजेन्सी है। अधिकाधिक रूप से विभेदित और प्रगतिशील तथा अधिकाधिक उन्नत समाज से जो अपेक्षा की जा सकती है, वह यह है कि चयन के प्रमुख आधार और साथ ही समाजीकरण की एजेन्सी के रूप में इसकी भूमिका बढ़ती जाएगी। 'खुद के दम-खम पे बने आदमी' की किवदंती में एक सुनहरी यादों से बुनी रूमानियत का तत्व होता है और उसका अधिकाधिक मिथकीय बनता जाला निहित नियति है- अगर उसका यह अर्थ न लगाया जाए कि वह केवल उसकी अति सामान्य मूल परिस्थिति से उठकर ऊंचे पायदान पर पहुंचा है बल्कि यह कि किसी औपचारिक शिक्षा के मदद के बगैर 'जिंदगी के थपेड़ों की पाठशाला' से उसने अपनी हैसियत पा ली है।

पब्लिक स्कूल की व्यवस्था की संरचना और व्यक्ति के समाजीकरण में तथा समाज में भूमिकाओं के आवंटन में उसके योगदान विश्लेषण, मुझे लगता है, अमेरिकी समाज के विद्यार्थियों के लिए खासा महत्त्वपूर्ण है। इस स्थिति से जुड़े बहुरंगी पक्षों को दायरे से बाहर रखते हुए मेरा विचार है कि पब्लिक स्कूल की व्यवस्था के कुछ प्रमुख संरचनात्मक प्रारूपों को सामने रखा जा सकता है और कम से कम कुछ मायनों में वे अपने इन दायित्वों को कैसे निभाते हैं, इसकी रूपरेखा प्रस्तुत की जा सकती है। इस आलेख में इस विश्लेषण की न्यूनतम रूपरेखा को दर्शाया जा सकता था। परंतु यह आशा की जा सकती है कि समाज वैज्ञानिक और इस व्यवस्था का निर्धारण करने वाले लोग इसके महत्त्व को समझते हुए इस विश्लेषण को आगे बढ़ाते हुए इसके वृहत्तर पक्षों का गंभीरता से विचार करेंगे। ◆

संदर्भ :

* हॉवर्ड एज्यूकेशनल रिव्यू व्हॉन्यूम 29, क्र. 4 (शरद 1959) पृ. सं. 297-318 से लेखक की टिप्पणी : इस लेख के पहले ड्राफ्ट के संपादन और आवश्यक सामग्री जुटाने के लिए शोध सहायता प्रदान करने के लिए मैं कैरोलीन कूपर का ऋणी हूं।

1. इन विधानों का मुख्य आधार, बोस्टन महानगरीय इलाके के दस पब्लिक हाई स्कूलों के लड़कों की सामाजिक गतिशीलता पर किया गया अध्ययन है जिसे सैम्युअल ए. स्टाउफ्फर, फ्लोरेन्स आर क्लूकॉहन, और वर्तमान लेखक द्वारा किया गया था। इस संदर्भ में प्रकाशित साहित्य उपलब्ध न होना दुर्भाग्यपूर्ण है।
2. जे. ए. काहल, दि अमेरिकन क्लास स्ट्रक्चर (न्यूयार्क : रिन्हार्ट ॲन्ड कं. 1953) से इस अध्ययन की तालिका पृ. संख्या-283 पर देखें। एज्युकेशनल टेस्टिंग सर्विस द्वारा प्रकाशित हाई स्कूल छात्रों के राष्ट्रीय स्तर पर लिए गए नमूनों से प्राप्त आंकड़े भी इसी प्रकार के संबंधों की ओर इशारा करते हैं। उदाहरण के लिए, ईटीएस का अध्ययन दर्शाता है कि महाविद्यालय की योजना बनाने वाले हाई स्कूल के वरिष्ठ छात्रों में से पिता के व्यवसाय पर जो भिन्नताएं उभरीं उसका लड़कों में अनुपात 35 प्रतिशत से 80 प्रतिशत और लड़कियों में 27 प्रतिशत से 79 प्रतिशत के बीच था।
3. ऊंची प्रस्थिति से आने वाला परंतु क्षमतावान समूह उसके प्रतिपक्ष से कम महत्त्वपूर्ण क्यों है, इसके दो मुख्य कारण है। पहला तो ये है कि जिस समाज में शिक्षा और व्यावसायिक अवसरों का विस्तार हो रहा है, वहां सामान्य प्रवृत्ति उन्नयन की होती है और ऐसे में अधो-दिशा में गतिशील होने का सामाजिक दबाव इतना अधिक नहीं होता जितना इसके विपरीत स्थिति में होता है। दूसरा कारण यह है कि ऐसी 'आरामदेह' प्रणालियां उपलब्ध हैं जो 'अच्छी श्रेणी' पाने में जिसको पसीना छूटता है ऐसे ऊंची परिस्थिति से आने वाले लड़के को प्रश्रय प्रदान करती हैं। उसे निम्न अकादमिक स्तर के महाविद्यालय में भेजा जा सकता है, वह ऐसे विद्यालयों में जा सकता है जहां क्षमता के स्तर को आंकने में सख्ती नहीं बरती जाती।
4. यहां चर्चा पब्लिक स्कूलों के संदर्भ में है। सभी प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों के छात्रों में से केवल 13 प्रतिशत गैर-पब्लिक स्कूलों में जाते हैं, यह अनुपात उत्तर-पूर्व में 22 प्रतिशत से दक्षिण में 6 प्रतिशत तक जाता दिखाई देता है। यू. एस. ऑफिस ऑफ एज्युकेशन, बेनियल सिस्टम ऑफ एज्युकेशन इन यूनाइटेड स्टेट्स 1954-56 (वॉशिंगटन : यू. एस. गर्वनमेण्ट प्रिंटिंग ऑफिस, 1959), अध्याय ii ''स्टेटेटिक्स ऑफ स्टेट स्कूल सिस्टमस, 1955-56'' तालिका-44, पृ. सं. 114
5. 1955-56 में, अमेरिका में पब्लिक प्राथमिक विद्यालयों में अध्यापक कर्मचारियों में 13 प्रतिशत पुरुष थे। वहीं, पृ. 7
6. पारंपरिक और प्रगतिशील विद्यालयों के प्रारूपों विपर्यय प्रस्तुत करने के लिए सामान्य सामग्री को ही आधार बनाया गया है (किसी एक अधिकारिक स्रोत का आधार लेने के बजाय)।
7. प्राथमिक विद्यालय में उपलब्धियों के इन दो अंगों और उनके

संबंधों की चर्चा उपलब्ध सामग्री के आधार पर संचित प्रभावों से सामने आए हैं। इसमें किसी विशिष्ट विशेषज्ञ के मत नहीं रखे गए हैं। मुझे ऐसे लगता है कि इस तरह उपलब्धियों के संदर्भ में मैकस्लेलैण्ड और उनके सहयोगियों द्वारा उपयोग में ली गई परिभाषा सबसे निकट रूप से लागू होती है। देखें, डी. सी. मैकस्लेलैण्ड और अन्य दी अचिव्हमेण्ट मोटिन्ह (न्यूयार्क ॲप्लेटॉन सेन्चुरी क्राफ्ट्स इंक 1953)

8. परिवार में पहचान की प्रक्रिया पर मेरा आलेख, 'सोशयल स्ट्रक्चर एण्ड दि डवलपमेन्ट ऑफ पर्सनलिटी, साइकीयट्री, खण्ड-21 (नवंबर 1958) पृष्ठ संख्या 321-40 देखें।

9. ध्यान देने लायक बात यह है कि कैथोलिक स्थानीय स्कूलों में पुरानी अमेरिकन परंपरा को सामान्यतः निभाते हुए शिक्षक के रूप में नन्स हुआ करती थीं। इस संदर्भ में फर्क केवल इतना भर है कि यहां तीव्र प्रतीकात्मक रूप से मां और शिक्षक के बीच अंतर को रेखांकित किया जाना है।

10. यह सारांश है पार्सन्स, आर. एफ. बेटस् और अन्य फैमिली, सोशयलायजेशन अण्ड इण्टरेक्शन प्रोसेस (ग्लनको 111: फ्री प्रेम, 1955)

11. अन्य अनेक संदर्भों की ही तरह इसमें समाज के अन्य महत्त्वपूर्ण विवरणात्मक संसाधनों के साथ समानांतरता देखी जाती है। इसका सटीक उदाहरण है मतदान की प्रक्रिया जिसमें राजनैतिक समर्थन का वितरण पार्टी उम्मीदवारों में किया जाता है। यहां इस तथ्य से तनाव उभरता है कि एक उम्मीदवार और उसकी पार्टी कार्यालय से जुड़े पूर्वापेक्षित सभी संसाधन जिसमें सबसे महत्त्वपूर्ण है सत्ता का लाभ उठाने में सक्षम बनेंगे तो दूसरी तरफ अन्य फिलहाल इनसे वंचित रहेंगे। इस तनाव से राहत मिलती है एक तरफ संवैधानिक कार्यवाहियों में सामूहिक प्रतिबद्धताओं के माध्यम से तो दूसरी तरफ इस तथ्य से कि सामाजिक जुड़ाव का आधार गैर-राजनैतिक तत्वों से उभरता है जो मतदान संबंधी आचरण का निर्धारण इतने प्रभावी रूप में करता है कि वह पार्टी की नीति-रेखाओं को भेद देता है। सामान्य आदमी उससे जुड़ी विभिन्न भूमिकाओं के तहत उन लोगों से जुड़ा होता है जिनका राजनैतिक झुकाव उसके खुद के झुकाव से भिन्न है और इस कारण से वह उसके विरोधी दल के बारे में यह राय नहीं बना सकता कि वह ऐसे दुष्टों से भरी पड़ी है जिन पर व्यवहारिक स्तर पर काट लगाई जाए और ऐसा करते वक्त वह निश्चित रूप से अपने हल से थोड़ा भी विचलित नहीं होता। चुनावी संरचना की इस विशेषता को सबसे प्रभावी ढंग से बी. आर. बदलेसन, पी. एफ. लेझसीफिल्ड और डब्ल्यू. एन. मैकफी, 'बोरिंग' (शिकागो : यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस : 1954) इस किताब में प्रस्तुत

टॅलकॉट पार्सन्स

संयुक्त राज्य अमेरिका में सन् 1902 में जन्मे टॅलकॉट पार्सन्स हावर्ड यूनिवर्सिटी में समाजशास्त्र के प्रोफेसर रहे हैं। पार्सन्स ने समाजशास्त्र पर अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकें लिखी हैं।

किया है इसको अवधारणात्मक रूप से मेरे आलेख वोटिंग एण्ड दी इक्विलिब्रियम ऑफ अमेरिकन पोलिटिकल सिस्टम टू-बरडिके और ए. जे. ब्रोडेक्क (सं) अमेकिरन वोटिंग बिहेवियर एलवो 111, फ्री प्रेस 1959) इस किताब में शामिल को देखें।

12. वही

13. जे. ए. काहल, 'एज्युकेशनल एण्ड आक्युपेशनल एक्सपिरेन्स ऑफ 'कॉमन मैन बॉयज' हावर्ड एज्युकेशनल रिव्यू खण्ड-23 (ग्रीष्म, 1953) पृष्ठ संख्या 186-203

14. पब्लिक माध्यमिक स्कूलों के पढ़ाने वाले कर्मचारियों में से लगभग आधे यानी (49 प्रतिशत) पुरुष हैं। बाइनियल सर्वे ऑफ एज्युकेशन इन दी यूनायटेड स्टेटस् 1954-56, ऊपर उद्धृत अध्याय-11 पृ. 7

15. उदाहरण के लिए देखें सी. डब्ल्यू. गारडन दी सोशयल सिस्टम ऑफ दी हाईस्कूल- द स्टडी इन सोशयोलोजी ऑफ ॲडालेसन्स (ग्लेको 111 : फ्री प्रेस 1957)

16. जे. रिले, एम रिले और एम. मूर ॲडोलेसन्स ब्ल्यूज एण्ड दि रिझमन टाइपोलॉजी, एस. एम. लिपसेट और एल. लॉवेनथाल (सं) दि सोशयोलॉजी ऑफ कल्चर एण्ड दी अनलिलिसिस ऑफ सोशयल कल्चर (ग्लेस्को 111 : फ्री प्रेस, 1960) में।

भाषान्तर : प्रज्ञा जोशी